धारावाहिक - क्या क्या कहूं?

(हिन्दी)

मूल कहानी: सिलसिलुवार - क्याह क्याह वनु (कश्मीरी)
अनुवाद : लेखक

म.क.रैना

सूची

विलायती घड़ी	३
खज़ाना	७
स्वर्ग व नरक	११
सम अंक, विषम अंक	१६
पास और फेल	१९
कैटरपिलर	२२
बिन बुलाये मेहमान	२८
शेर का शिकार	३४
नबु लालु	३९
तकदीर	४४
अंतिम खेल	५४
त्रिशूल छड़ी	५८

विलायती घड़ी

रात को मैं सो न सका। आधी रात हुई होगी जब मैंने दीवार पर टंगी हुई इस घड़ी पर नज़र डाली। यह घड़ी कोई पच्चास साल पुरानी थी। इसका डायल मैला कुचैला, कालिख पुता हुआ था और अंधेरे में इस पर समय देखना आसान नहीं था। मगर मैं भी कुछ कम नहीं था। मैं ने घड़ी की चाल को पूरी तरह जान लिया था। जानता भी कैसे नहीं? अब तो मुझे तीन साल हो गये उस को नये रूप में देखते हुये। सच पूछो तो अब मुझे अंधेरे में भी उस की सुईयाँ साफ दिखायी देती थीं।

अभी रात का एक ही बजा था। पांच बजने में बहुत समय था। चूंकि मुझे नींद नहीं आ रही थी, इसलिये मैं ने समय काटने के लिये घड़ी की ओर ध्यान दिया। यह घड़ी मेरे दादाजी पचास साल पहले अमृतसर से लाए थे। घड़ी की शक्ल सूरत अच्छी थी। इस के तीन कवर थे और अलार्म इतना ऊंचा था कि पूरा मुहल्ला जाग जाये। मेरे पिताजी का कहना था कि यह घड़ी शुरू से ही रेडियो के समय के साथ चलती है, क्या मजाल एक मिनट भी आगे या पीछे चले।

मगर तीन साल पहले इस घड़ी के साथ एक घटना घटी। यह टाँड़ से नीचे गिर पडी और बंद हो गई। चाबी देने पर भी नहीं चली। हमारे मुहल्ले में एक घड़ी साज़ की दुकान थी। उस ने घड़ी को अंदर बाहर ध्यान से देखा और बोला, ''यह ठीक नहीं होगी। इसकी मशीन कुछ अलग ही है, बाकी मशीनों की तरह नहीं।'' उस की बात सुन कर मुझे बहुत गर्व हुआ। भला एक साधारण घड़ी साज़ इस घड़ी को कैसे ठीक कर सकता है? यह थोड़े ही कोई साधारण घड़ी थी! यह असली विलायती घड़ी थी और यह बात हमें दादाजी ने कसम खा-खा कर कही थी।

घड़ी साज़ भले ही घड़ी को ठीक न कर सका, पर था जानने वाला। उस ने मुझे उस घड़ी साज़ का पता बता दिया जो इस तरह की घड़ी को ठीक कर सकता था। मेरे लिये इतना ही बहुत था। मैं अपने दोस्त राजा को साथ लेकर तुरन्त ही गुरगारी मुहल्ला के लिये निकल पड़ा। वहां पहुंच कर मैं ने उस कारीगर घड़ी साज़ को ढूंढ निकाला। उस का नाम था व्वस्तु रज़ाक। उस के कोई दुकान नहीं थी। वह अपने घर में ही घड़ियाँ ठीक करता था।

हम ने जब व्वस्तु रज़ाक के घर पहुंच कर उस के कमरे में प्रवेश किया, हमारी आँखें फटी की फटी रह गयीं। कमरे की टाँडों पर सैकड़ों घड़ियाँ सजा कर रखी हुई थीं, कुछ रूस की, कुछ जापान की और कुछ जर्मनी की। ऐसा मैं ने अंदाज़ा लगा लिया। एक दो घड़ियां शायद भारतीय भी रही होंगी। कुछ घड़ियाँ चल रही थीं और कुछ बंद पड़ी हुई थीं।

हम ने व्वस्तु रज़ाक को सलाम किया। उस ने सरसरी तौर पर हमें देखा और अपना सिर फिर नीचे कर लिया। दर-असल वह एक घड़ी ठीक करने में जुटा हुआ था। ग्राहक भी सामने बैठा था। मैं ने सोचा, यह तरीका ठीक है। व्वस्तु रज़ाक सचमुच बड़ा कारीगर होगा। अपने काम से मतलब, न कोई सवाल न कोई जवाब।

कोई एक घंटे के बाद व्वस्तु रज़ाक ने अपना सिर उठाया। घड़ी के मालिक का चेहरा खिल उठा, यह सोच कर कि काम हो गया। मगर व्वस्तु रज़ाक बोला, ''अमु लाल! आप को कल फिर आना होगा क्योंकि इस घड़ी की एक सूई गुम हो गई है। वह मुझे अब हाथ से बनानी पड़ेगी।'' ग्राहक के चेहरे का रंग उड़ गया। मेरी तरफ देख कर बोला, ''अब बताइये क्या करें? यह घड़ी

मेरे पिता जी दूसरे वर्ल्ड वार के समय कांगो से लाए थे। यह असल में अम्रीका की घड़ी है, पर इसकी सूई कहाँ मिलेगी? अब अगर व्वस्तु रज़ाक इसकी सूई हाथ से बनाता है, वह क्या इस घड़ी पर जचेगी। कहाँ अम्रीका की घड़ी और कहाँ हाथ की बनाई हुई सूई?'' ग्राहक ने कारीगर से घड़ी वापस ली, मुँह बनाया और निकल पड़ा।

व्वस्तु रज़ाक की आयु कोई ५०-५२ की रही होगी। उस ने मेरी तरफ तीखी नज़रों से देखा और बोला, ''देख लो, यह आज के ज़माने का हाल है। मैं इस के लिये कहाँ से अम्रीका की सूई पैदा करूं और घड़ी में लगा दूं। सच तो यह है कि लोग भी पागल हो गये हैं। अगर कोई आदमी कबाडी से भी पुरानी घड़ी खरीद कर लाता है, कहता है कि मेरे एक सम्बन्धी ने विलायत या अरब से लाई है। अरे भई, यहाँ क्या अच्छी अच्छी घडियां नहीं मिलती हैं? खुदा की कसम, कल ही मेरे मंज़ूर अहमद के लिये नयी घड़ी आई है। यह उसके मामा ने कराची से भेजी है। आप को क्या बोलूं, घड़ी है कि क्या? टिक टिक की आवाज़ ऐसी आती है मानो कोयल कूंक रही हो। एक राज़ की बात बताऊं? मंज़ूर अहमद के मामा ने मुझे बताया कि कराची की ही घडियों को अम्रीका वाले अपना नाम देकर बेचते हैं। अरे ओ मंज़ूरा ....!!'' व्वस्तु रज़ाक अपने बेटे को बुलाने लगा। वह नहीं आया। व्वस्तु रज़ाक धीरे से बोला, ''वह अपने दोस्तों को नई घड़ी दिखाने गया होगा।'' मैं ने सिर हिलाकर हाँ कर दी। असल में मैं उसकी हर बात पर सिर हिलाता था क्योंकि मुझे अपनी घड़ी ठीक जो करानी थी! मैं मन ही मन में सोच रहा था कि पता नहीं, मेरी घड़ी देख कर क्या क्या अपशब्द बोलेगा। मैं इसी सोच में था कि उस की आवाज़ सुनाई दी, ''लाओ भई, तुम्हारा क्या है?''

मैं ने डरते हुये अपनी घड़ी फेरन से बाहर निकाली और उस के सामने रख दी। अपने सीने की धडकन को हाथ से सम्भाल कर मैं उसकी बात सुनने को तैयार हो गया। व्वस्तु रज़ाक ने घड़ी हाथ में ली और बोला, ''अब देख लो, इसे कहते हैं असली विलायती घड़ी। इस को कौन नकार सकता है। खुदा की कसम, किस्मत वाले हो। आज कल ऐसा माल कहाँ मिलता है?'' मैं उस की बात सुन कर बहुत खुश हुआ। मेरा चेहरा खिल उठा। मैं ने कहा, ''यह कल टाँड से गिर गई और बंद हो गई।'' मेरा यह कहना था कि व्वस्तु रज़ाक ने घड़ी नीचे रखी। उस का चेहरा गुस्से से लाल हो गया। मुझे लगा कि वह अभी मेरी पिटाई कर देगा। वह बोला, ''ऐसे माल की ऐसी बे-इज्जती? आदमी अगर ऐसी चीज़ सम्भाल नहीं सकता तो दरिया में फैंक देना चाहिये।''

व्वस्तु रज़ाक ने मेरी घड़ी एक तरफ रख दी और पूछा, ''तुम कहाँ रहते हो? '' मैं ने कहा, ''बाल गार्डन।'' वह बोला, ''तो जाओ, अपना काम करो। परसों आना, घड़ी तैयार होगी।'' मैं ने पूछा, ''कितने पैसे लगेंगे?'' उस ने अब की बार मेरी तरफ नहीं देखा। वह दूसरी एक घड़ी खोल रहा था। बिना मेरी तरफ देखे बोला, ''पांच रुपये साथ में लाना।'' यह सुन कर मैं अपने घर की तरफ चल पड़ा। मगर मेरा मन परेशान था। कहीं यह मेरी घड़ी के विलायती कल पुरज़े देसी कल पुरज़ों से बदल न दे? लेकिन क्या हो सकता था। कोई उपाय तो था नहीं। उस रात मुझे नींद नहीं आई।

तीसरे दिन दोपहर के समय मैं व्वस्तु रज़ाक के घर पहुंचा। वह खाना खा रहा था। मुझे देख कर बोला, ''लो जी, मुबारक हो। तुम्हारी घड़ी ठीक हो गयी पर तुमको वह रविवार तक यहीं

पर रखनी पड़ेगी। तुम बार बार वापस कहाँ आओगे ? मैं उस को पूरी तरह टेस्ट करके रखूंगा।'' मुझे तस्सली हुई, चलो घड़ी तो ठीक हो गई। मैं ने खुद अपनी भी तारीफ की, कि ऐसे ज़बरदस्त कारीगर के पास आकर मैं ने कितना अच्छा किया। साथ ही मैं यह सोच कर भी खुश था कि घड़ी की सूईयाँ भी सही सलामत होंगी। नहीं होती, तो क्या वह बताता नहीं!

मैं ने इधर उधर देखा। मुझे मेरी घड़ी कहीं भी दिखायी नहीं दी। चेहरे का रंग फिर उड गया पर अपने आप को तस्सली दी। मैं ने कहा, ''क्या पता, घडियों के टेस्ट के लिये दूसरा कमरा रखा होगा!''

रविवार को मैं सुबह सवेरे व्वस्तु रज़ाक के घर पहुंचा। उस के सामने एक छोटा लड़का बैठा हुआ था। लड़के की कलाई पर चमकती हुई घड़ी बंधी थी। मैं समझ गया कि यही मंज़ूर अहमद है और इसकी यही घड़ी कराची से आई होगी। मंज़ूर अहमद के हाथ में पीतल के दो औज़ार थे जिन्हें वह तख्ती पर लट्टू की तरह घुमा रहा था।

व्वस्तु रज़ाक ने एक थेली में से मेरी घड़ी निकाल कर मेरे सामने रख दी। बोला, ''देख लो, किस तरह घोड़े की चाल से चल रही है। मैं ने घड़ी को गौर से देखा। उस का डायल काला था जबकि मेरी घड़ी का डायल सफेद था। मैं ने कहा, ''आप से कोई भूल हुई है। यह मेरी घड़ी नहीं है। मेरी घड़ी का डायल तो सफेद है।'' व्वस्तु रज़ाक ने आह भर ली और बोला, ''हाँ, तुम्हारा कहना सच है। यह मंज़ूर साहब मेरा बहुत प्यारा है। यह मेरी दूसरी औरत से बहुत दुआओं के बाद पैदा हुआ है। कल इसी ने तुम्हारी घड़ी का डायल उठाया और उसकी फिरकी बना दी। अब बताओ, क्या कहूं? फिर भी खुदा बहुत मेहरबान था। उसी साइज़ का डायल एक पुरानी घड़ी से निकला जो मैं ने इस में लगा लिया, नहीं तो घड़ी काम की ही नहीं रहती।'' मैं ने तकरीबन रोते रोते वह घड़ी अपने हाथ में ली। डायल काला भी था और जीर्ण भी। डायल बदल जाने के लिये व्वस्तु रज़ाक ने एक रुपया कम किया। चार रुपये लिये। ज्योंही मैं सलाम करके वापस जाने को मुडा, उस ने आवाज़ दी। बोला, ''यह अपनी अमानत वापस ले जाओ।'' मेरी समझ में कुछ नहीं आया। ''कौन सी अमानत? ''मैं ने पूछा। मुझे कुछ कहने से पहले ही उस ने मंज़ूर को एक ज़ोरदार थप्पड मारा। मंज़ूर रोने लगा। व्वस्तु रज़ाक ने उसे बोला, ''यह क्या कोई खेलने की चीज़ है? अरे! इतनी कीमत तो तुम्हारे बाप की भी नहीं है।'' इतना कहने के बाद उस ने मंज़ूर अहमद के हाथ से वह दो पीतल के औज़ार छीन लिये और मेरी तरफ बढ़ाते हुये बोला, ''देखो जी, खुदा गवाह है। मैं किसी की चीज़ नहीं रखता हूं। मैं ने जब घड़ी को अलग अलग कर फिर जोड़ना शुरू किया, तो यह दो औज़ार कहीं भी फिट नहीं हुये। अब यह तुम्हारी अमानत हैं, इन्हें सम्भाल कर रखना। अगर घड़ी फिर कभी बंद हो जाती है तो यह औज़ार साथ लेकर मेरे पास आना। क्या पता, उस समय समझ में आये कि यह कहाँ पर लगते हैं। मगर एक बात कहे देता हूं, घड़ी सचमुच विलायती है। औज़ार निकाल कर भी बराबर चलती है। ऐसी घड़ी आज कहाँ मिलेगी?''

मैं बहुत उदास होकर निकल पड़ा। घड़ी से निकाले हुये औज़ार मैं ने छिपा कर रखे कि घर में किसी को पता न चले। मगर व्वस्तु रज़ाक की कारीगरी देखिये, तीन साल के बाद भी घड़ी चल रही है और बराबर समय दे रही है।

एक बार फिर मैं ने दीवार पर लगी इस घड़ी की तरफ देखा। सुबह के तीन बज रहे थे। मुझे पाँच बजे उठना था। मैं ने फिर सोने की कोशिश की और देखते देखते मुझे नींद आ गई।

✹ ✹ ✹

खज़ाना

उस दरवेश का चेहरा फिर मेरी आंखों के सामने आ गया। डरावनी शक्ल, ऊंचा कद, बड़ी बड़ी आंखें, कानों में बालियाँ, सिर पर सफेद पगड़ी, गले में सर्प की तरह डाला हुआ गुलूबंद और हाथ में काली माला। दरवेश सचमुच दरवेश ही था या कोई चालबाज़, मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। मैं सिर से पैर तक कांप उठा। मुझे उसकी भारी और भयानक आवाज़ फिर सुनाई दी, ''समय ज़्यादा नहीं है। जो मैं कह रहा हूं, वह कर। बस, केवल दो दिनों में वह खज़ाना हासिल करना होगा। बाकी सब तुम्हें मालूम ही है।''

मैं ने इधर उधर देखा। न कोई आगे था और न पीछे। यह केवल उस दरवेश की छाया थी जो मुझे चार दिन से अपने सामने दिखाई दे रही थी। मैं ने अपने आप को सम्भाला। ''मैं इतना घबराया हुआ क्यों हूँ? उस बेचारे ने ऐसा क्या कहा? उसने जो भी कहा वह केवल मेरी मदद करने के लिये ही कहा।'' मैं ने अपने आप से कहा। चार दिन पहले वह मुझे श्मशान के पास मिला था। उसने कहा था, ''तुम्हारी ज़िन्दगी बहुत लम्बी है लेकिन काम सब अधूरा है। क्या क्या करोगे और कैसे करोगे? मेरी बात मानोगे तो तेरा भला कर के जाऊंगा। छः दिन के अंदर तुम्हें सुबह पौ फटने से पहले पखलन पहाड़ी की चोटी पर पहुंचना होगा। वहां पर सब से बडे भोजपत्र के पेड के नीचे एक खज़ाना दफन है। खज़ाने के ऊपर एक नाग बैठा होगा लेकिन वह तुम्हें देख कर ही भाग जायेगा। तुम्हें वह खज़ाना निकाल कर मेरे पास लाना है। आधा तुम्हारा होगा और आधा मेरा। मैं उस नदिया के पार रहता हूँ। हो सके तो अकेले मत जाना, किसी और को साथ में लेकर जाना। खज़ाना बहुत बड़ा है, तुम्हें कोई फर्क नहीं पड़ेगा। तुम्हारी सात पीढ़ियां आराम से खा सकेंगी। बाकी तुम्हारी मरज़ी। पर एक बात याद रखना। यह काम तुम्हें छः दिन के अंदर ही करना है। अगर नहीं हुआ तो मैं किसी दूसरे को भेज दूंगा।''

खज़ाने की बात सुन कर मैं खुश हुआ पर खतरा भी सामने दिखा। मेरे ऊपर बहुत उधार था। ऐसा लगता था कि जीवन भर भी चुका नहीं पाऊंगा। मैं कब शादी करूंगा और कब अपना घर बसाऊंगा? हालांकि दरवेश का चेहरा सामने आते ही मेरी साँस रुक जाती थी, पर खज़ाना याद करके मेरी आँखों में नयी रोशनी आती। मैं ने फैसला किया कि कल सवेरे ही मैं खज़ाना हासिल करने के लिये निकल पडूँगा।

मंज़िल बहुत दूर थी। मैं ने आठ दस रोटियाँ कपडे में बांध कर उठाईं और पौ फटते ही निकल पड़ा। किसी दूसरे को साथ ले जाने का सवाल ही नहीं था। अगर मुसीबत उठानी ही है तो अकेले ही क्या बुरा है। मेरे अंदर क्या हिम्मत नहीं है? दूसरे किसी को साथ लेकर क्यों उसको खज़ाने में शरीक बनाना है?

मैं चलता रहा। पहाडियाँ, जंगल, दरिया, खेत, सब पीछे छोड़ता हुआ मैं दोपहर के समय काली माता के मन्दिर के क़रीब पहुंचा। वहां बहुत भीड़ थी। मैं ने सोचा, लोग आरती करने आये होंगे। मन्दिर के पास पहुंचा तो देखा कि कोई आरती नहीं हो रही है। लोग लाइन में होते हुए भी एक दूसरे को धक्का देकर आगे बढ़ने की कोशिश कर रहे थे। एक नवजवान लाइन को सीधा करने में लगा था। वह किसी किसी के ऊपर सीधा खड़ा न रहने के लिये हाथ भी उठाता था। मैं ने उस नवजवान से पूछा, ''भाई, यहाँ क्या हो रहा है?'' उसने हँस कर जवाब दिया, ''लगता

है, नये नये यहाँ आये हो। तुम्हें कुछ मालूम नहीं क्या?'' मैं ने इनकार में सिर हिलाया तो उसने कहा, ''स्वर्ग से धर्मराज ने अपना दूत यहाँ भेजा है और वह स्वर्ग की टिकटें बेच रहा है। जिस किसी को मरने के बाद स्वर्ग जाने का शौक हो, वह अपना टिकट यहाँ पर ही खरीद सकता है।''

टिकट सौ रुपये का था पर मेरी जेब में कुल बीस रुपये थे। मुझे क्या मालूम था कि स्वर्ग की टिकटें अब ज़मीन पर ही बिकने लगेंगी। मैं ने सोचा, ''अच्छा हुआ कि दरवेश की बात सुन कर मैं इस तरफ आया। यह काम भी करके ही रखूंगा। यह अलग बात है कि पैसा पूरा जेब में नहीं है, पर वह क्या उधार नहीं देंगे? हम थोडे ही कहीं भागे जा रहे हैं! और कल से तो हमारी गिनती भी बड़े बड़े लोगों में होगी। खज़ाना जो घर पर आया होगा!''

मैं ने नवजवान को बहुत नरमी से पैसा पूरा न होने की बात सुनायी। उस ने आश्वासन दिया। बोला, ''कोई बात नहीं। मैं सिफारिश करूंगा।'' उसके आश्वासन पर मैं लाइन में खडा रहा। मेरा चेहरे ऐसा खिल उठा मानो मेरे सिवा कोई भी स्वर्ग में जाने के योग्य नहीं था। यह सोच कर कि नवजवान बाद में धोखा न दे, मैं ने उस के साथ दोस्ती करनी शुरू की। उससे मुझे पता चला कि टिकट बेचने का कैम्प पांच दिन जारी रहेगा। वह नवजवान किसी दूसरे शहर का था और उसे धर्मराज के दूत ही अपने साथ यहां लाये थे। नवजवान के साथ बात करने में मुझे बड़ा मज़ा आ रहा था पर यह मज़ा ज़्यादा देर तक कायम न रहा। ज्योंही उस ने मुझसे पूछा कि टिकट लेकर कहाँ जा रहे हो, मेरे पसीने छूट गये। टांगें कांपने लगीं। मैं ने सोचा, कहीं ऐसा तो नहीं कि उसे खज़ाने की बात का पता चला हो। नहीं तो उसे यह परेशानी उठाने की क्या ज़रूरत कि मुझे कहाँ जाना है? मैं ने उस की बात का जवाब ही नहीं दिया, पर उस ने फिर कहा, ''क्यों जी, क्या सोच रहे हो? कुछ कहते क्यों नही? हम क्या साथ आयेंगे?'' मैं ने कहा, ''नहीं, ऐसी बात नहीं है। मैं यह सोच रहा था कि टिकट का बाकी पैसा कहां से लाऊं?'' इस के बाद नवजवान कुछ नहीं बोला और मैं ने भी चुप रहना ही ठीक समझा।

मैं आगे बढ़ता रहा। सामने एक स्टेज बना हुआ था जिस पर एक बुज़ुर्ग बैठा था। उस के साथ ही एक युवक बैठा हुआ था जो लोगों से पैसा वसूल कर रहा था। बुज़ुर्ग स्वयं ही टिकट दे रहा था। मेरी बारी आयी तो मैं ने युवक के सामने बीस रुपये रख दिये। उस ने मुझे तीखी नज़रों से देखा। मैं ने कहा, ''भाई, आज मेरी जेब में इतना ही है। भरोसा रखो, कल बाकी पैसा दूंगा। चाहो तो पांच ज़्यादा ले लेना।'' मगर युवक पर कोई असर नहीं हुआ। उस ने साफ इनकार किया। बुज़ुर्ग मुंह से कोई बात नहीं करता था, केवल इशारा करता था। उसने युवक को पैसे लेने से मना किया। मगर मैं भी कहां मानने वाला था? मैं वहीं पर डट गया। मेरे पीछे जो लोग थे, उन्हों ने शोर मचाया। मैं किसी सूरत में भी टिकट लिये बिना जाने को तैयार न हुआ।

मेरे पीछे के कुछ आदमी बीच बचाव में आ गये। फ़ैसला हुआ कि २० रुपये देकर मैं केवल टिकट की बुकिंग कर सकता हूं। टिकट तब मिलेगा जब मैं बाकी ८० रुपये दूंगा। मैं ने गनीमत समझा कि चलो एक सूरत तो निकल आई। बुकिंग करके रखूंगा, कल जब खज़ाना लेकर वापस आऊंगा तो बाकी पैसे देकर टिकट ले ले लूंगा। धर्मराज के दूत ने यह बात मान ली। उसने सिर हिला कर मुझे एक परचा दिया जिस पर बीस रुपये की रसीद और टिकट की बुकिंग की बात लिखी हुई थी। मैंने परचा जेब में डाला और चल पड़ा।

चलते चलते मेरे मन में एक खयाल आया। कहीं ऐसा न हो कि कल वह मुझे टिकट देने से इनकार करे, या यह कि मेरे वापिस पहुंचने से पहले ही वह निकल गये हों। मुझे चिन्ता होने लगी। अगर मैं वापस मुड़ कर घर से पैसा लाता हूं तो पहाड़ी पर जाने को देर हो जायेगी। मैं ने अपने आप को समझाया, ''क्या करेंगे? लूट है क्या? बुकिंग नहीं की है? धोखा करेंगे तो अदालत में जाऊँगा। एक एक करके सब से हिसाब लूँगा।''

पखलन पहाडी के पास पहुंचा तो सूर्य अस्त हो चुका था। अंधेरे में पहाड़ी के ऊपर जाना खतरनाक था। पर रात को कहाँ रहूँ? उस जगह जंगली जानवरों का खतरा भी बहुत था। मेरी नज़र एक देवदार के पेड़ पर पड़ी। पेड़ बहुत बड़ा था और उसकी एक टहनी पर बैठा भी जा सकता था। मैं ने फैसला किया कि रात उस के ऊपर ही काटी जाये। मैं बंदर की तरह पेड़ पर चढ़ गया। टहनी पर पहुंच कर बैठने के लिये जगह बनायी और पोटली खोल कर रोटी खाने लगा। उस के बाद मैं पेड़ पर ही सो गया।

सुबह के चार बज रहे होंगे जब मैं जाग गया। अभी पौ फटने में समय था। मैंने समय ज़ाया करना मुनासिब नहीं समझा। मैं पेड़ से नीचे उतरा। एक छड़ी हाथ में ली और पहाड़ी पर चढना शुरू किया। अँधेरे में कुछ भी साफ साफ दिखायी नहीं दे रहा था पर मैं अंदाज़े से ही रास्ता ढूँढ कर आगे बढ़ रहा था। आगे काँटेदार झाडियाँ थीं। मेरे हाथ पैर काँटों से कट कर छलनी हो गये पर मैं ने हिम्मत नहीं हारी। मैं शेर की हिम्मत करके ऊपर की तरफ चढ़ रहा था। खज़ाने का लालच तो मन में था ही, साथ ही स्वर्ग की बुकिंग से भी हौसला बढ़ गया। दो चार जगह मैं लुढक कर गिर भी पड़ा पर मैं ने हिम्मत नहीं हारी। मेरी आखों के सामने केवल पखलन पहाड़ी की चोटी थी और था खज़ाना। आखिरकार मैं पखलन पहाड़ी की चोटी पर पहुंच तो गया पर अब तक अधमरा हो चुका था। अभी सूरज निकलने में बहुत समय था। मैं एक पेड़ के नीचे लेट गया।

मेरे अनुमान से मुझे लेटे हुये आधा घंटा हुआ होगा कि मेरे कानों में ज़ोर की आवाज़ सुनायी दी। जैसे कोई शेर दहाड़ रहा हो। मैं डर के मारे सहम गया। यहाँ तक तो सही सलामत पहुंचा था पर अब कहीं मुझे शेर न खा जाये! मैं ने इधर उधर देखा, कुछ भी नज़र नहीं आया। बहुत दूर मुझे एक भोजपत्र का सूखा पेड़ नज़र आया। मैं दौड़ कर गया और उसके ऊपर चढ़ गया। मुझे कहीं भी शेर दिखायी नहीं दिया। शायद यह मेरा वहम था।

कुछ देर बाद मैं पेड़ से उतर आया। सूरज अब निकलने ही वाला था। मैने भोजपत्र का बड़ा पेड़ ढूँढना शुरू किया पर दूर दूर तक ऐसा कोई पेड़ नहीं था। अब मैंने गौर से उसी पेड़ को देखा जिस पर मैं शेर के खौफ से चढ़ गया था। उस के नीचे न तो नाग था और न ही मुझे कोई खज़ाना दिखायी दिया। पर मैं ने सोचा कि हो न हो, खज़ाना इसी पेड़ के नीचे दबा होगा और क्या पता, नाग मुझे देख कर ही भाग गया हो!

मैंने स्लेटी पत्थर के टुकड़ों से खोदना शुरू किया। हाथों में छाले पड़ गये। अब सूरज बहुत ऊपर आ चुका था। दो फुट खोद कर भी मुझे खज़ाना नज़र नहीं आया पर मैं ने हिम्मत नहीं हारी। मैं ने सोचा, कुछ समय तकलीफ उठाना पड़ेगा, फिर सारी उम्र ऐश करना है। मैं खोदता गया, दो के बाद तीन और तीन के बाद चार फुट, पर खज़ाना कहीं भी नहीं था।

अब मुझे प्यास लग रही थी। मैं पानी ढूंढने के लिये इधर उधर भटकता रहा पर पानी न मिला। एक जगह मैं ने एक झाड़ी के नीचे हज़ारों की संख्या में कीड़े देखे। झाड़ी के नीचे की

ज़मीन गीली थी। मैं ने एक पत्ता उस ज़मीन पर ऐसे बिठाया कि उस का सामने का सिरा लटकता रहे। आहिस्ता आहिस्ता उस पत्ते के ऊपर पानी इकट्ठा होना शुरू हो गया। मैं ने एक और पत्ते को छोटी कटोरी बनाकर उस के नीचे रख दिया। अब पानी की बूंदें एक एक करके उस कटोरी में गिरने लगीं। इस तरह पानी जमा करने में घंटों लगते पर इस से मेरी आशा बँधी रही।

जब कटोरी में दस बारह पानी की बूंदें जमा हो गईं, मैंने उन्हें अपनी सूखी जीभ पर डाल दिया। मेरे पूरे बदन में ठंडक आ गई। कटोरी को फिर से अपनी जगह पर रख लिया। सूरज अब सिर के ऊपर आ चुका था। मैं दौड़ कर पेड़ के पास पहुंचा ताकि कुछ और खोद कर खज़ाना पा सकूँ। ज्यूँ ही मैं खोदे हुये गड्ढे के पास पहुंचा, मेरे पैरों तले ज़मीन खिसक गई। गड्ढे में एक बडा काला नाग कुंडली मार कर बैठा था। दरवेश की बातें सच निकलने लगीं। नाग मिल गया, आगे खज़ाना भी मिलेगा। दरवेश ने कहा था कि नाग मुझे देख कर ही भाग जायेगा, पर ऐसा नहीं हुआ। वह नहीं भागा। यह सोच कर कि शायद उस की नज़र मुझ पर न पड़ी हो, मैंने उसे शी .... शी.... करके भगाने की कोशिश की और अपने पैर से उसे धक्का दिया। नाग ने पैर लगते ही एक झटके में मुझे काट लिया। मैं तुरन्त ही नीचे गिर पड़ा। आंखों के सामने अंधेरा छा गया और नज़रें पेड़ की तरफ अटक गयीं। शायद मैं मर चुका था।

✷ ✷ ✷

स्वर्ग व नरक

मेरे प्राण निकलते ही मेरे सामने दो हट्टे कट्टे जवान पैदा हो गये। यह शायद नये ज़माने के यमदूत थे। चेहरा गोरा था और सींग भी नहीं थे। एक क्लीन शेव था और दूसरे ने फ्रेंच कट दाढ़ी रखी थी।

मैं अभी उन का कद और गठीला जिस्म देख ही रहा था कि उन्होंने मुझे बाहों से पकड़ कर उठा लिया। उस के बाद वह आकाश की ओर उड़ने लगे। मैं हैरान व परेशान था। मैं धरती पर कभी सीधी तरह चल भी नहीं पाता था और यहां उन के साथ साथ मैं भी हवा में उड़ रहा था। हालांकि मेरे हाथ पांव हिल नहीं रहे थे, फिर भी मैं हवाई फौज के जंगी जहाज़ की तरह उड़ रहा था। मैं समझ गया कि मैं मर चुका हूं पर लालच मेरे अंदर अब भी पनप रहा था। मैंने नीचे की तरफ ध्यान से देखा। नाग अब भी गड्ढे में कुंडली मार कर बैठा था। शायद उस को अब भी डर था कि मैं वापस आकर खज़ाने पर कब्ज़ा कर लूंगा।

दुनिया भर का सफर करके हम एक जगह पहुंचे। पर क्षमा करें। यहां दुनिया कहां थी? वह तो मैंने मर कर पीछे छोड़ दी थी। हाँ, यह कहें कि आसमान भर उड़ा कर यमदूत मुझे इस जगह ले कर आ गये। क्लीन शेव यमदूत ने अपनी पतलून की जेब से एक यंत्र निकाला और अपने मुंह के सामने रखा। यह यंत्र बिलकुल ऐसा ही था जैसा हमारी धरती पर टेलीफोन हुआ करता था। इस यंत्र का रंग ढंग अच्छा था। शायद यह भी टेलीफोन ही रहा होगा, पर इस में तार नहीं लगा था। हम ने सुना था कि विलायत में तार के बिना ही टेलीफोन होते थे। शायद इस जवान ने भी वहीं से ही लाया होगा। खैर, मुझे इस से क्या लेना देना। धरती पर मेरा अपने घर में फोन लगाने का शौक धरा ही रह गया था। मेरे पिताजी ने टेलीफोन महकमे में दस साल पहले पांच सौ रुपये भर कर एक टेलीफोन बुक किया था। पर फोन कहाँ मिला? जब मैं इस बारे में अफसरों से बात करने के लिये गया तो उन्होंने कहा, ''अरे यार, तुम पागल तो नहीं हुये हो? यहाँ पर बीस साल पहले बुकिंग किये हुये 'ओन योवर टेलीफोन' वालों को बीस बीस हज़ार रुपये भर कर भी टेलीफोन नसीब नहीं हुआ, तुम केवल पांच सौ भर कर फोन ढूंढ रहे हो।'' मेरे पास कोई जवाब ही न था। अब जब कि दरवेश ने मुझे मदद करने की ठान ली थी, मैं ने सोचा था कि अब की बार मैं भी तत्काल स्कीम में बड़ी कीमत देकर टेलीफोन खरीद लूंगा। पर जिन्दगी ने साथ न दिया। अगर भगवान मुझे खज़ाना ले जाने का समय देता, शायद मैं भी खिड़की पर बैठ कर और फोन हाथ में लेकर मखन लाल को आवाज़ देकर पुकारता ताकि फोन देख कर उस की घिग्घी बंद हो जाती। पर यह सब नहीं हुआ। असल में मेरा नसीब ही खोटा था, पर किसे कहूँ?

मैंने एक लम्बी आह भरी और फिर से यमदूत के फोन को देखने लगा। यमदूत किसी से बात कर रहा था। बीच बीच में वह मेरी तरफ देखता, सिर हिलाता और कभी कभी हंसी का ठहाका लगाता। दूसरा यमदूत अब भी मेरा हाथ पकड़े हुए था।

कुछ देर के बाद यमदूत ने फोन अपनी जेब में रखा और मुझसे मेरा नाम पूछा। मैं ने कहा, ''भाई, धरती पर लोग मुझे प्यार से 'साहब' कह कर बुलाते थे। मगर सच पूछो तो असली नाम कृष्णदास है। कृष्ण का दास कम और अपना दास ज़्यादा।'' क्लीन शेव यमदूत ने मेरी तरफ गौर

से देखा पर कोई जवाब नहीं दिया। हम चलते रहे, या यूं कहिये कि उड़ते रहे। आगे घने बादल थे। मेरे शरीर में ठंडक आ गई। मैं ने यमदूतों के साथ फिर बात करना चाही पर वह दोनों मनहूस निकले। उन्होंने मेरी बातों को अनसुना कर दिया। शर्मिन्दा होकर मैं चुप हो गया।

जब हम बादलों में से बाहर निकले, मुझे सामने एक बड़ी दीवार दिखाई दी। दीवार में दो दरवाज़े थे। एक के ऊपर 'स्वर्ग' लिखा था और दूसरे के ऊपर 'नरक'। मैं बहुत गर्व के साथ स्वर्ग की तरफ बढ़ने लगा कि यमदूतों ने ज़बरदस्ती मुझे नरक की तरफ घुमा दिया। मैं वहां जाना नहीं चाहता था पर मेरी एक न चली। मेरे हाथ पांव मानो सुन्न हो गये थे। नरक के अंदर घुसते ही मेरी आखों के सामने अंधेरा छा गया। मैं ने धरती पर जो कुछ नरक के बारे में सुना था, बिलकुल ऐसा ही था। जगह जगह आग दहक रही थी और यमदूत उस के सामने नाच रहे थे और गा रहे थे। मेरे खयाल से कुकर्मी उस आग में जल रहे थे। कहीं कहीं आदमी पेड़ों से लटक रहे थे। एक जगह लोगों का बड़े भीड़ थी। उन्होंने आसमान सिर पर उठा रखा था। धर्मराज एक मंच पर बैठा हुआ था और उन को सज़ा सुना रहा था। मैं जब उन लोगों के पास पहुंचा तो ऐसा लगा कि मेरे सिर पर आसमान टूट पड़ा हो। भीड़ में मैं ने कई ऐसे लोगों को देखा जो धरती पर बहुत दान-पुण्य किया करते थे। उन की एक झलक पाने के लिये लोग हज़ारों खर्च करके और मीलों पैदल चल कर आते थे। मै ने अपने आप से कहा, ''तो वह सब झूट था!'' मेरे अन्दर की आवाज़ भी मेरे यमदूतों को साफ सुनाई देती थी। मेरी बात सुन कर फ्रेंच कट वाले यमदूत के कान खड़े हो गये। हालांकि उस की समझ में कुछ भी नहीं आया था फिर भी वह बोला, ''आज क्यों इतना चिल्ला रहे हो? वहां क्यों नहीं सोचा? '' मैं ने कहा, ''भाई, मैं वह नहीं सोच रहा जो तुम सोच रहे हो। मैं यह देख कर हैरान हूं कि जिन्होंने धरती पर अच्छे कर्म किये हैं उन में से भी मैं कई एक को यहाँ देख रहा हूं।'' यमदूत शायद सब कुछ जानने वाला था। वह बोला, ''ऐसी बात नहीं है। असल में धरती के लोग होते कुछ हैं, दिखते कुछ और हैं।'' मुझे मेरे सवाल का जवाब मिल गया। मुझे मेरे बारे में तो कोई शक ही न था। मैं तो केवल नरक में जाने के लिये ही जन्मा था। अगर कभी मैं ने कोई अच्छा कर्म किया भी था, वह मैं ने उसी समय दुनिया भर को सुना सुना कर बेच दिया था। दुनिया में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं था जिसे मैं जानता था और जिसे मैं ने अपने किये हुये अच्छे कार्य के बारे में चिल्ला चिल्ला कर न बताया हो। पर अब मैं इन लोगों के बारे में सोच रहा था जिन का दुनिया में बहुत नाम था और जिन की शुमार अच्छे लोगों में होती थी। मेरी नज़रों के सामने ऐसे कम से कम एक दर्जन आदमी थे जो इस समय धर्मराज से विनती कर रहे थे। यह अच्छा हुआ कि उन की नज़र मेरे ऊपर न पड़ी, नहीं तो मेरे सामने भी उनका अपमान हो जाता और मुझे पाप लगता।

मेरे लिये शायद कुदरत ने अच्छा ही सोचा था। मैं ने स्वर्ग की बुकिंग की थी और बुकिंग की रसीद अब भी मेरी जेब में थी। मैं ने यमदूत से अपना हाथ छुड़ाया और एक पत्थर पर बैठ गया। वहां घास थोड़े ही था कि आदमी उस पर बैठ कर सुस्ता लेता। फ्रेंच कट वाले ने मेरी तरफ गौर से देखा ओर पूछा, ''क्यों, अभी से हार कर बैठ गये? आगे और भी बहुत कुछ है।'' मैं ने कहा, ''नहीं, ऐसी बात नहीं है। बात यह है कि मैं ने धरती पर ही स्वर्ग की बुकिंग की है। यकीन न हो तो रसीद दिखा दूं?'' यमदूत को यकीन नहीं हुआ। वह बोला, ''अरे यार! तुम जैसे फटीचर के

पास स्वर्ग की टिकट कहां से आई? स्वर्ग की टिकटें क्या रास्ते में पड़ी होती हैं कि तुम ने भी एक उठा ली। दिखाओ तो सही!''

मैं ने जेब से पर्ची निकाली और उस को दिखादी। पर्ची पर अच्छा भला धर्मराज के दूत का निशान था। यमदूत के चेहरे का रंग बदल गया। उस ने पर्ची अपने साथी को दिखायी। फिर दोनों ने किसी और ही भाषा में आपस में बात की। शायद संस्कृत में। मैं कुछ भी न समझा। हमने कब संस्कृत पढ़ी थी? हम भगवद्गीता के भी पहले पांच या सात श्लोक ही पढ़ सकते थे, वह भी इस लिये कि हमें वह ज़बानी याद थे। नहीं तो कहाँ हम और कहाँ संस्कृत भाषा? हमारे माता पिता भी अंग्रेज़ी पढ़ने पर ही ज़ोर देते थे। कहते थे कि संस्कृत पढ़ कर क्या करोगे?

मैं आँखें फाड़ फाड़ कर उन दोनों को देख रहा था। फोन वाले यमदूत ने मेरी बाँह पकड़ी और बोला, ''भई, हमारी कोई गलती नहीं है। हमें जो बोला गया, हम ने वही किया। चलो, धर्मराज को यह परची दिखाते हैं। वही बता सकते है कि आगे क्या करना है।'' मैं ने अब अपने आप को बहुत भाव दिया। मैं ने कहा, ''बस, यहाँ से आगे मैं एक कदम भी नहीं चलूंगा। आप को जाना है तो जाओ, मैं यहीं पर बैठ कर आप की प्रतीक्षा करूंगा।'' उन्होंने मुझे वहीं पर बैठने की अनुमति दी और स्वयं धर्मराज से मिलने गये। उन के वापस आने तक मैं यहाँ वहाँ देखता रहा। मेरे आगे पीछे जो हो रहा था, वह देख कर ही मैं भय से कांप उठा। मैंने भगवान कृष्ण का ध्यान किया और उससे कहा, ''भगवन, मुझे इस के आगे बचा लेना। मैं जैसा हूं वैसा हूं, पर मेरे नाम के साथ तुम्हारा नाम भी जुड़ा है ना! अगर मुझे सज़ा होती है तो तुम्हारी भी बदनामी होगी। लोग बोलेंगे कि कृष्ण को नरक मिला।''

शायद मेरी विनती कृष्ण भगवान ने सुन ली। दोनों यमदूत हंसते हुये वापस आये और बोले, ''भई, तुम्हारी आधी मुश्किल तो हल हो गई। पर तुम्हारे नाम पर अब भी ८० रुपये बकाया हैं। अगर तुम ८० रुपये देते हो तो हम तुम्हें आज ही स्वर्ग में ले जायेंगे।'' मेरी जेब में कोई पैसा न था। मैं ने उन से विनती की, ''मुझे उधार दे सकते हो क्या? बाद में मैं वापस कर दूंगा। स्वर्ग में कोई न कोई तो अपना होगा, पैसे वाला।'' उन्होंने जवाब दिया, ''हमारे पास पैसा कहाँ है? यहाँ समय पर किस को वेतन मिलता है? तुम विश्वास करोगे क्या कि हमें तीन महीनों से वेतन नहीं मिला। तुम लोग सोचते होंगे कि हम यहाँ पर ऐश करते हैं! अरे भई! हम ही जानते हैं कि हम पर क्या गुज़रती है? '' मैं यह सच्चाई जान कर हैरान रह गया। मैं ने पूछा, ''यहाँ बजट वजट कुछ नहीं होता है क्या? वह पैसा कहां जाता है?'' उन्हों ने आह भरी। बोले, ''होता क्यों नही, होता है। पर वह सारा पैसा देवताओं के टी.ए. और डी.ए. पर खर्च होता है।''

''टी.ए. और डी.ए.? कैसा टी.ए. और डी.ए.?'' मैं हैरान हो गया। उन्होंने विस्तार से बताया, ''वह हर दिन लाव-लश्कर लेकर पृथवी लोक व पाताल लोक जाते हैं ना! वहाँ पर वह ज़्यादा दिन तो नहीं ठहरते लेकिन वहाँ तक जितना लम्बा फासला है, वह उस के हिसाब से ही पैसा लेते हैं। अब पैसे बचेंगे तो कैसे? हम भी चुपचाप सब कुछ बरदाश्त कर लेते हैं। और कर भी क्या सकते हैं? यहाँ थोड़े ही तुम्हारे वहाँ के जैसा हाई कोर्ट या सुप्रीम कोर्ट है? देवतागण जो बोलेंगे, वही अटल है।''

यह सब बातें सुन कर मैं काँप उठा। मैं ने सोचा इस हिसाब से तो धरती पर ही स्वर्ग है। वहां पर कोई आदमी सौ कदम भी ज़ोर ज़ोर से बात करते हुये चले तो दस जगह राह चलने वाले

पूछेंगे कि भाई, तुम को क्या तकलीफ है? यहाँ की तो दुनिया ही निराली है। हम ने ऐसी बात कहाँ कभी देखी है। धरती पर एक दिन के लिये भी किसी का वेतन बंद करेंगे तो वह हाई कोर्ट तक पहुंचेगा।

लेकिन इस समय इस मसले पर बात करना मुनासिब नहीं था। इस समय सवाल था ८० रुपये का। मैने फोन वाले यमदूत से, जो दोनों में सीनियर जान पड़ता था, कहा, ''भई, मुझे तुम अपना छोटा भाई ही मान लो। ऐसा करते हैं कि तुम मुझे वापस उस भोजपत्र के पेड़ तक ले जाओ। अगर नाग भाग गया होगा तो मैं खज़ाने पर अपना कब्ज़ा कर लूंगा। यदि ऐसा करोगे तो आधा तुम्हारा, आधा मेरा। अगर तुम्हें यह लगता है कि मैं भाग जाऊंगा, तो मेरी टांगों को बांध कर रखना।'' लेकिन बात नहीं बनी। उन्होंने कहा कि एक बार परलोक आकर वापस जाने का सवाल ही पैदा नहीं होता। मैंने उन के पाँव पकडे कि कोई तरीका हो तो देख लो। आखिर मैंने स्वर्ग की बुकिंग करने में जो २० रुपये खर्च किये हैं, वह क्या यूंही ज़ाया हो जायेंगे?

फोन वाले दूत ने दूसरे दूत के साथ मशवरा किया। उस के बाद उस ने जेब से फिर फोन निकाला और किसी से बात की। उस के चेहरे से लगता था कि काम होने वाला है। कुछ समय बात करने के बाद उसने फोन जेब में रखा और कहा, ''हाँ, एक रास्ता है। अगर तुम ने धरती पर किसी भिखारी या फकीर को कोई पैसा दिया है, वह यहाँ गिना जायेगा।'' मुझे याद आया। मैने उसी दरवेश को नया ताज़ा १०० रुपये का नोट दिया था जिस ने मुझे खज़ाने का पता बताया था। और यही एक बात मैं ने सब से छिपाकर रखी थी, क्योंकि मैं नहीं चाहता था कि कोई इस राज़ को जान जाये। मैं ने यमदूत से कहा, ''हाँ, दिया क्यों नहीं है? मैं ने एक दरवेश को पूरे सौ रुपये दिये हैं। अब तुम कहोगे रसीद दिखाओ, वह तो नहीं है।''

जवान ने फिर फोन पर बात की और सिर हिलाया। बोला, ''किस्मत वाले हो। सचमुच यही एक बात तुम ने किसी को नहीं सुनायी है और इसी पुण्य का फल तुम्हें अब मिल रहा है। चलो, अब स्वर्ग की तरफ चलो।''

हम स्वर्गलोक की तरफ उडने ही वाले थे कि मुझे पीछे शोर सुनाई दिया। लोगों में से मेरे कुछ जानने वालों ने मुझे देख लिया था। वह दौड़ कर आए और मेरे पैर पकड़ लिए। मुझ से बोले, ''हम यहाँ अकेले पड़ गये हैं। मन नहीं लग रहा है। केवल तुम ही हमारी हिम्मत बंधा सकते हो। कृपया स्वर्ग में मत जाओ। हमारे साथ ही रहो। क्या हम ने धरती पर तुम्हारे हर सच झूट में तुम्हारा साथ नहीं दिया था? अब क्यों हमें देख कर मुंह फेर लेते हो।'' मैं ने देखा, इन लोगों में गोकुल भी था, जिस का सब कुछ मैं ने लूट कर हडप किया था। इस समय वह कुछ ज़्यादा ही बोल रहा था।

मैं ने सोचा, अगर मैं इन की बात सुनता हूं तो यह अवसर मेरे हाथ से निकल जायेगा। कितनी दौड़-धूप करके मुझे स्वर्ग में जाने का अवसर मिला है, और अब यह लोग पैदा होगये। अरे मैंने तुम लोगों का क्या खाया है? धरती का हिसाब तो धरती पर ही खत्म हो गया। जाओ, तुम अपनी जगह, मैं अपनी जगह। मैं ने उन से नम्रता से कहा, ''मैं तुम लोगों को जानता ही नहीं। मेरे पीछे क्यों पड़ गये हो? जाओ अपना काम करो।'' मैं ने यमदूत को इशारा किया कि जलदी स्वर्ग की तरफ चलो। उन्होंने मेरी बाँह पकड़ी और मुझे लेकर स्वर्ग की तरफ उड़ने लगे। मगर मेरी किस्मत खराब थी। ज्योंहीं मैं ऊपर की ओर उड़ने लगा, गोकुल ने मेरी टाँग पकड़ ली

और मुझे ज़ोर से खींचा। मैं एकदम गिर कर पत्थर की दीवार से टकराया और मेरा सिर फूट गया।

इस के साथ ही मैं नींद से जाग उठा। मैं ने देखा, मेरी माँ मेरी टाँग पकड़ कर मुझे हिला रही थी और कह रही थी, ‘‘अब उठो भी! परबत नहीं जाना है क्या? देर हो गई। तुम्हारे यह दोस्त कब से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।’’

✹ ✹ ✹

सम अंक, विषम अंक

मैं ने अपनी आंखें मीच लीं।। यह सब मेरा स्वप्न था। मैं ने घड़ी की तरफ देखा, पांच बज रहे थे। दरवाज़े पर मेरे तीनों मित्र विजय, राजा और निका मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। मैं उठ कर अपने आंगन में पहुंचा और मुँह हाथ धो लिया। धोबी का धुला कुर्ता पाजामा पहना और मित्रों के साथ परबत की ओर चल पडा।

दर असल इस दिन मैट्रिक का परिणाम आने वाला था। हम ने रात को ही निश्चय कर लिया था कि सुबह पौ फटने से पहले हम परबत जायेंगे। वहाँ देवी की परिक्रमा भी करेंगे और साथ ही गणेश बल जाकर चावल के दाने भी उठायेंगे। हमारी किस्मत में जो होगा, वह वहीं पता चलेगा।

थोड़ा थोड़ा उजाला था। हम तेज़ कदमों से चलते रहे। सफा कदल, नवा कदल, आली कदल और नवहट्टा से होकर हम गणेश बल पहुंचे। वहाँ एक दूसरे को स्वयं ही तिलक लगाया, यह सोच कर कि पंडित जी के पास जायेंगे तो वह आरती के लिये धूप दीप पकड़ा देगा। हमारी जेब में फूटी कौड़ी न थी और इस तरह धूप दीप का पैसा न देने से सब के सामने हमारा अपमान होता। हम ने गणेश जी को प्रणाम किया, माथा टेका और आगे की ओर निकल पड़े। आगे वह पेड़ था जिस के नीचे लोग पक्षियों के लिये चावल के दाने डालते थे। लोग यही चावल के दाने उठा कर अपनी किस्मत आंकते थे। खास कर, बच्चे यह देखने के लिये कि वह पास होंगे या फेल, दाने उठा कर गिनते। असम अंक हो तो पास, सम अंक हो तो फेल। ज्यूं ज्यूं पेड़ निकट आता गया, त्यूं त्यूं मेरी टांगें ज़्यादा कांपने लगीं।

सब से पहले निका ने चावल के दाने उठाये और विजय के हाथ में दिये। उसका चेहरा पीला पड़ रहा था। निका हमारा लीडर था इसलिये हर काम पहले उसे ही करना पड़ता था। विजय ने दाने गिने, पूरे ग्यारह थे। वह बोला, ''पूरे ग्यारह हैं।'' मतलब असम अंक और पास। निका का चेहरा फिर से खिल उठा। इस के बाद विजय ने और फिर राजा ने दाने उठाये। विजय के १९ दाने थे, मतलब वह भी पास था। राजा के साड़े पंद्रह, याने १५ पूरे और एक आधा। हम सब ने आधे पर विचार किया। फैसला हुआ कि आधा गिनने में नहीं आयेगा, इसलिये वह १५ ही हुये। परिणाम यह हुआ कि राजा भी पास होगया। मेरी हिम्मत बढ़ गई। मैं ने सोचा आज का दिन अच्छा है। सब का ही असम अंक निकलता है तो मेरा क्यों नहीं निकलेगा? मैं ने ज़ोर से हाथ मार कर चावल उठाए और निका को दिये। चूंकि मैं अपनी पार्टी का डिप्टी लीडर था इसलिये मेरे चावल गिनने का हक केवल निका को ही था। निका ने गिन लिए, एक बार, फिर दूसरी बार। मैं अपना दिल पकड़ कर उस के जवाब की प्रतीक्षा कर रहा था। निका ने चावल के दाने वापस मेरे हाथ में दिये और बोला, ''भाई. यह २६ हैं। न कम न ज़्यादा।'' मैं परेशान हुआ। इस का मतलब था कि केवल मैं ही फेल था, बाकी सब पास। ऐसा कैसे हो सकता है? राजा ने तो अपने सब पर्चे मेरी नक्ल करके ही लिखे थे। वह कैसे पास होगा और मैं फेल। मैं ने उन से कहा, ''कहीं तो कोई गलती हुई है। मैं फिर से चावल उठाता हूं। जो निकलेगा, मैं मान लूंगा।'' मैं ने दूसरी बार चावल उठाये पर इस बार गिनने के लिये राजा को दिये। उस ने गिने, पूरे १७ थे। मैं खुश हुआ लेकिन निका ने मेरी खुशी छीन ली। उस ने कहा, ''एक गुरू ने कहा है यदि शक हो तो तीसरी

बार देखना चाहिए।'' बाकी लड़के उसकी बात से सहमत हुए। डर के मारे मेरा पसीना निकलने लगा। जैसे तैसे मैं ने एक बार फिर चावल के दाने उठाये और स्वयं ही गिन लिये। लेकिन किस्मत ने साथ नहीं दिया। अंक फिर सम ही निकला। मेरी टांगें कांपने लगीं। चौथी बार देखने का सवाल ही नहीं था। पर मेरे मन में एक खयाल आया। अगर भगवान को मुझे फेल ही करना होता तो दूसरी बार असम अंक क्यों देता। मैं ने सोचा, दूसरी बार का ही अंक ठीक है। मैं ने मित्रों से पूछा, ''यह तीसरी बार के लिये किस गुरू ने बोला था?'' उन्हें ठीक से मालूम नहीं था। वह बोले, ''हम ने लोगों से सुना है पर गुरू का नाम मालूम नहीं है।'' मैं ने कहा, ''फिर तो रहने दो। जो दूसरी बार का अंक था, वही सच है।''

मेरी इस बात से मेरे मित्रों को भी तस्सली हुई। क्योंकि हम तो चाहते ही थे कि सब पास हों। उन्होंने मेरी बात को पूरी तरह स्वीकार किया। निका बोला, ''गुरू की बात असल में गलत ही है। मुझे लगता है कि यह बात किसी स्वार्थी आदमी ने अपने मतलब के लिये फैलायी होगी।'' साथ ही उस ने मुझे बधाई दी, जिस का मतलब था कि दूसरी बार का ही अंक सही था और इसलिये मैं अपने आप को पास ही समझूं। दूसरे लड़कों ने भी मुझे बधाई दी। इस के बाद हम देवी की परिक्रमा करने लगे। हमारे पीछे पीछे दो और लड़के और तीन लड़कियाँ आ रही थीं। उन्होंने भी हमारे बाद चावल के दाने उठाये। शायद उन का भी आज परिणाम आने वाला था।

रास्ते में हमें जहां कहीं भी मंदिर या मूर्ती नज़र आई, हम ने अपना माथा टेका। जहाँ कहीं सिंदूर वाला पत्थर मिला, हम ने उसे हाथ से छू कर आंखों को लगाया। हमारी इच्छा केवल यह थी कि रेडियो पर परिणाम बोलने वाला हमारा रोल नम्बर भी बतादे।

परिक्रमा कर के जब हम काठी दरवाज़े पर पहुंचे, वहाँ सब्ज़ी वाले सब्ज़ी बेच रहे थे। निका की माँ ने उसे हंद लाने को कहा था। एक सब्ज़ी बेचने वाली औरत के पास हंद की तीन गठरियाँ थीं। हम उस के साथ सौदा करने लगे। इतनी देर में एक अधेड़ अवस्था का आदमी आया। उस ने यह हंद अपनी थेली में डाल दी और सब्ज़ी बेचने वाली औरत को अठन्नी देने लगा। हम ने शोर मचाया। मैं ने कहा, ''श्रीमान, यह हंद तो हम ने पहले ही खरीदी है। आप ने कैसे अपनी थेली में डाल दी?'' आदमी बहुत तेज़ मिज़ाज का था, बोला, ''तुम्हारा दिमाग तो खराब नहीं हुआ? ज़्यादा बोलोगे तो कुचल कर रख दूंगा? मैं ने क्या यह नगद अठन्नी देकर मोल नहीं ली?'' निका को भी गुस्सा आया। वह बोला, ''आप ने हमें क्या बच्चा समझ कर रखा है? हम तुम्हारी यह थैली फाड़ कर रख देंगे। शराफत से हमारी हंद वापिस कर दो।'' देखते ही देखते बहुत सारे लोग जमा हो गये। वह दो लड़के और तीन लडकियाँ भी सामने आ गईं जिन्होंने हमारे बाद चावल के दाने उठा कर अपनी किस्मत आज़माई थी। उन के चेहरे खिल हे थे। शायद उन सब का अंक असम ही रहा होगा।

एक बुज़र्ग आदमी और इन लड़कों और लड़कियों ने हमारा पक्ष लिया। सब्ज़ी बेचने वाली औरत को भी हमारी बात माननी पड़ी। अधेड़ अवस्था का आदमी अपनी थेली से हंद वापस निकालने पर मजबूर हुआ। हम ने उसे अठन्नी पकड़ाई और वह चल दिया। इस के बाद हम लड़कों और लडकियों से बात करते करते घर की तरफ निकल पड़े।

कुछ देर चल कर लड़कों और लड़कियों ने हम से आज्ञा मांगी। हम ने उन्हें हमारा पक्ष लेने के लिये धन्यवाद दिया। उन में से एक को याद आया। वह बोला, ''आप की हंद कहां है?'' हम

ने देखा, उस आदमी के साथ झगड़े में हम अपनी हंद उठाना ही भूल गये थे। हम दौड़ कर वापिस गये। काठी दरवाज़े पर पहुंचे तो वहां न सब्ज़ी बेचने वाली औरत थी और न हमारी हंद। हम ने सोचा, मर गये। घर में पीट पीट कर हमारी धुलाई कर के रखेंगे। हम मित्रों में से जब भी कोई गलती करता था, मार हम सब को पडती थी। सब जानते थे कि हम एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं। खास कर हम निका के भाई, जिन्हें हब बॉयटोठ कहकर पुकारते थे, से डरते थे। वह पिटाई करते समय आगे पीछे कुछ नहीं देखता था पर हमें प्यार भी बहुत करता था। जो कुछ वह निका के लिये लाता, हमारे लिये भी अवश्य लाता।

हम ने रास्ते में ही सोच विचार करना शुरू किया कि अब क्या किया जाये। अठन्नी भी वापस नहीं आयेगी और हंद भी नहीं मिलेगी। राजा बड़ा अक्लमंद निकला। उस ने कहा, ‘‘ मेरी बात मानो तो मेरे पास एक उपाय है।’’ हम ने कहा, जल्दी कहो। उस ने कहा, ‘‘गणेश बल के पास मैं ने बहुत नुनर उगी हुई देखी है। कहो तो एक अठन्नी के मूल्य की वही नुनर निकाल कर घर ले जायेंगे।’’ निका गुस्से से तिलमिलाया। उस ने राजा से कहा, ‘‘पागल हुये हो क्या? हमें नुनर चाहिये कि हंद?’’ राजा वापस बोला, ‘‘थोड़ा अक्ल से काम लो। लानी तो थी हमें हंद, मगर यह कि आज हंद मिली ही नहीं। आज केवल नुनर बिक रही थी।’’ यह सुन कर निका उछल पडा। बोला, ‘‘उपाय बहुत अच्छा है। चलो जल्दी करो।’’ फिर क्या था? हम सब गणेश बल की तरफ दौड पड़े।

जब हम वापस घर पहुंचे तो दस बज रहे थे। निका के बदले मैं बॉयटोठ के पास गया, नुनर सामने रख दी और कहा, ‘‘आज हंद कहीं भी नहीं मिली। वहाँ हर जगह केवल नुनर बिक रही ती। सब लोग थैलियाँ भर भर के ले जा रहे थे, हम ने भी ली।’’ बॉयटोठ ने नुनर हाथ में ली और बोला, ‘‘बढ़िया ताज़ा नुनर है। अच्छा किया जो लेकर आये।’’ हमारी जान में जान आ गई।

बारह बजे रेडियो से परिणाम आने वाला था। मैं मन ही मन में बहुत परेशान था। मैं ने बहस करके दूसरी बार का ही अंक सच मान लिया था, पर अंदर ही अंदर बहुत घबराया हुआ था। ज्यूं ज्यूं नतीजे का समय नज़दीक आता गया, त्यूं त्यूं मेरी हालत बिगड़ती गई। पर माँ शारिका को कुछ और ही मंज़ूर था। ग्यारह बजे खबर आई कि परिणाम आज के बदले कल आएगा। मैं यह सुन कर बहुत खुश हुआ। परिणाम कल निकलने का मतलब था कि कल हमें फिर परबत जाना होगा, जहाँ फिर से चावल के दाने उठाये जायेंगे। मेरे लिए यह एक अच्छा अवसर था। मेरे बाकी मित्र यह सुन कर खुश नहीं थे। उन्हें डर था कि पता नहीं कल क्या होगा? किस का अंक सम निकलेगा और किस का असम?

✷ ✷ ✷

पास और फेल

रात को मैं देर तक नहीं सो सका। ज्यूं ही मुझे नींद आने लगती, मैं कोई न कोई भयानक स्वप्न देखता और झुंझलाकर जाग जाता। तब मैं ने सोचा कि सोने की कोशिश करना ही गलत है। मैं ने लिहाफ तले बैठ कर ही इंद्राक्षी का पाठ पढ़ना शुरू किया। यह पाठ मैं तब तक पढ़ता रहा जब तक कि नीचे से विजय ने आवाज़ न दी। मैं ने घड़ी देखी। पांच बज रहे थे। मैं ने मुंह हाथ धोया और मित्रों के साथ परबत की ओर निकल पड़ा।

मेरा एक और मित्र गुरगारी मुहल्ला में रहता था। उसका नाम था चमन लाल। पढ़ने में वह हम से भी दो कदम पीछे था। मेरे साथ उसकी अच्छी बनती थी क्योंकि दूसरे लडकों को उपनाम देने में हम दोनों एक समान थे। जय किशन हम से एक आध इंच ऊंचा था, नाम दिया था 'फ्रस'। मोती लाल की आंखें सदा शराबियों जैसी लगती थीं, उसको नाम दिया था 'ठरु'। शिबन एक बार चमचम करती स्वेटर पहन कर आया, उसको नाम दिया 'ज़रबाब'। प्राण नाथ बड़ी ज़मीन का मालिक था और वह हर दिन चावल और खाद की नई नई किस्मों के बारे में बताता, उसका नाम रखा 'खंड़ु खाद'। टोजा की खोपड़ी आधी साफ थी, नाम रखा था 'टिनि'। क्या क्या कहूं?

गुरगारी मुहल्ला के समीप पहुंच कर मुझे ध्यान आया कि चमन को भी साथ लिया जाए। मैं ने उस के घर जाकर उसे पुकारा। उसका पिता जाग गया और खिड़की खोल कर मुझे देखने लगा। मैं ने कहा, ''माहरा, चमन कहाँ है? क्या हमारे साथ परबत आयेगा?'' उस ने अजीब सा मुँह बनाया और बोला, ''उसे परबत जाने की क्या ज़रूरत है? वह पास है।'' यह कह कर उसने खिडकी बंद की और अंदर चला गया। मेरी हालत देखने योग्य थी। मेरे मित्रों ने मुझे कोसा। बोले, ''उसे बुलाने की क्या आवश्यकता थी?'' मैं ने उन से क्षमा मांगी।

ऐसी बात नहीं थी कि चमन का परिणाम हम से पहले निकला था। वास्तव में उस के पिता का मामा साधु बना था। नाम था काकूजी। काकूजी कभी कभी उन के घर आता और चमन उस की बहुत सेवा करता, कुछ पिता के भय से और कुछ अपने स्वार्थ के लिए। परीक्षा से बहुत पहले ही काकूजी ने चमन के घर पर डेरा डाला था। उसका चिमटा और कमन्डल भी उसके साथ था जिसकी देखभाल करने की जिम्मेदारी चमन की थी। जब चमन के पिता ने काकूजी से चमन की परीक्षा के बारे में बात की और यह भी कहा कि वह मेहनत भी नहीं करता है, तो वह बोला, ''क्या करेगा मेहनत करके और पढ़ के? जाओ अपना काम करो। मैं मंत्र पढ़ा हुआ प्रसाद देता हूं। परीक्षा के समय घर से निकलने पर उसे थोड़ा थोड़ा खिलाना। बस फिर देखो! वह वहां कुछ लिखे या न लिखे, पास अवश्य होगा। तुम्हें शक हो तो बोलो, मैं अभी से उस के लिये फर्स्ट डिविजन लिख कर रखता हूं।'' यह सारी बातें मुझे चमन ने ही बताई थीं। मैं ने तब उसे प्रार्थना की थी कि मुझे भी काकूजी के पास ले जाये। वह स्वयं तो इस के लिये तैयार हुआ पर उस के पिता ने इस की आज्ञा नहीं दी। पिता ने कहा, ऐसी राज़ की बातें किसी को बताया नहीं करते।

आगे चल कर हमें दो और लड़के मिले। वह भी परबत जा रहे थे। जब हम ने उनसे कल हुई चावल के दानों की घटना के बारे में बताया तो वह ठहाके मार कर हंसने लगे। वह बोले, ''पास या फेल थोड़े ही चावल के दानों से देखा जाता है! वह देखा जाता है कंकरों से।'' हम ने

सोचा, तब तो हम से गलती हो गई है। आगे कोई और गलती न हो, इसलिए हम उन के साथ साथ ही चलने लगे।

गणेश बल से निकल कर हम उस जगह पहुंचे जहां हमें कंकर उठा कर अपना पास फेल देखना था। उन दोनों लडकों ने अपनी किस्मत पहले देखी। उन में से एक पास हुआ और एक फेल। जो फेल हुआ, वह वहीं एक पत्थर बर बैठ कर रोने लगा। दूसरा लड़का उस को चुप कराने में लगा। उसे देख कर हम अपनी किस्मत देखना ही भूल गये। मैं उस के पास गया ओर कहा, ''अरे यार, तुम कंकरों की बात को सच मान रहे हो? क्या पता, भगवान तुम को भी पास ही करदे। उठो, गणेश जी का नाम लो और घर चले जाओ'' मैं उस से यह बात कह ही रहा था कि राजा ने मुझे कहा, ''तब हमें क्यों कंकर उठा कर देखना है? वैसे ही जो किस्मत में होगा, मिलेगा। अभी से क्यों परेशान हो लें?'' मैंने कहा, ''तो क्या? पास फेल नहीं देखेंगे?'' उस ने जवाब दिया, ''भई, जब उस लड़के को नसीहत दे रहे हो कि कंकर ही सब कुछ नहीं है, तो अपने आप को क्यों नहीं कहते?'' मैं ने सोचा, राजा शायद सच ही बोल रहा है। यह अलग बात थी कि उस को आज कंकर उठाने में डर लग रहा था।

वह दोनों लड़के घर की तरफ चल दिये। फेल हुआ लड़का अब भी रो रहा था पर दूसरा उसकी हिम्मत बंधा रहा था। उन के जाने के तुरंत बाद हम ने पेड़ के नीचे मीटिंग की और इस बात पर सोच विचार किया कि हमें कंकर उठाने की ज़रूरत है या नहीं? हम फेल हुये लड़के को देख कर पूरी तरह से टूट चुके थे। निका ने अपना फैसला सुनाया। बोला, ''इस बार पास फेल होने का फैसला माँ शारिका के ऊपर छोड़ते हैं। वही सब को पार लगाने वाली है। अभी से अपने मन को क्यों दुखी करना है?'' यह बात हम सब को पसंद आई।

परिक्रमा करने के बाद हम फिर काठी दरवाज़ा पहुँचे। सब्ज़ी बेचने वाली औरत आज भी उसी जगह बैठी थी। हम ने इधर उधर देखा। पहले दिन वाला अधेड़ अवस्था का आदमी कहीं दिखाई नहीं दिया। अचानक सब्ज़ी बेचने वाली औरत ने मुझे देख लिया। उस ने मुझे आवाज़ देकर बुलाया। हम उस के पास पहुंचे तो उसने अपनी जेब से एक अठन्नी निकाल कर हमें दी और बोली, ''कल तुम अपनी हंद उठाना भूल गये थे। मैं ने वह एक दूसरे खरीदार को बेची और तुम्हारे पैसे वापस आ गये।'' यह सुन कर हम खुश हो गए। निका बोला, ''आज की बोहनी अच्छी हुई है, दिन भी ठीक ही निकलेगा। मुझे ऐसा लगता है कि हम सब पास होंगे।'' मैं ने भी हाँ कर ली। इस के बाद हम हँसते हँसते घर की तरफ चल दिये और निका के घर पहुँच कर डेरा जमा लिया।

हमें मुश्किल से घर पहुंचे आधा घंटा हुआ होगा कि बाहर से किसी ने आवाज़ दी, ''अरे निका।'' हम ने बाहर देखा। निका का दोस्त अली मीर बाहर आंगन में एक अखबार लेकर खड़ा था। हमें देख कर वह दौड़ता हुआ अंदर आया और निका से बोला, ''मां की कसम, आज बिलकुल नहीं छोडूंगा। आज मुझे काकनी के हाथ की बनी हुई मछली खिलानी ही पड़ेगी। बा-खुदा, एक अच्छी खबर लेकर आया हूं।'' निका ने मछली खिलाने का वादा किया। अली मीर ने अखबार खोला और हमारे सामने रख दिया। इस अखबार में हमारा परिणाम छपा हुआ था। अली मीर का पिता एक प्रेस में काम करता था और वही यह अखबार सवेरे सवेरे अपने घर लाया था। हम ने परिणाम देखना शुरू किया लेकिन घबराहट में हमें अपना रोल नम्बर दिखाई नहीं दिया।

अली मीर ने अखबार हमारे हाथ से छीन लिया और बोला, ''तुम लोग देख क्या रहे हो। तुम सब पास हो और मैं भी पास हूं।'' इस के बाद उस ने हमें हमारे रोल नम्बर दिखाये। सचमुच हम सब पास थे। हम ने एक दूसरे को सीने से लगाया। बात फैल गई और सब को मालूम हुआ कि हम मैट्रिक में पास हुए हैं। सब के घर वाले निका के घर पर आये। बॉयटोठ भी आया। थर्ड डिविजन पाने पर हम सब को डाँटा पर अंदर से वह खुश था। अली मीर की माँग सुन कर वह उलटे पाँव मछली लाने के लिये बाज़ार गया।

उस दिन निका के घर पर सचमुच जैसे मेला लगा। मछली की बात सुन कर किस के मुंह में पानी नहीं आता? पर मैं मन से दुखी था। चमन का रोल नम्बर अखबार में नहीं था, याने वह फेल था। मेरी समझ में यह नहीं आ रहा था कि उस के पिता ने उसे प्रसाद खिलाने में कोई गलती की या काकूजी का दिया हुआ प्रसाद ही गलत था।

रेडियो पर परिणाम सुनते सुनते अच्छे अच्छों के पसीने छूटते हैं। जब परिणाम पढ़ने वाला वन वन टू , वन वन फोर, वन वन सेवन, वन टू वन ... बोलता है तो दिल की धड़कन बढ़ जाती है, साँस रुक जाती है। मैं ने कई बार ऐसे समय पर बड़े बड़े बलवीरों को कमज़ोर पड़ते देखा है। सुनने वालों के चेहरे का रंग उड़ जाता है। हम परिणाम आने की बे-सब्री से प्रतीक्षा कर रहे थे, पर मन में कोई भय न था। अखबार पहले से नहीं देखा होता तो हमारी हालत भी खराब होती।

बारह बजे हम ने रेडियो आन किया। परिणाम आना शुरू हो गया। हम ठहाके मार मार कर हंस रहे थे और गिन रहे थे कि किस रोल नम्बर से किस रोल नम्बर तक लडके फेल हुये हैं। निका हमें साथ साथ में यह बताता कि अभी किस स्कूल का परिणाम आ रहा है और उस के बाद किस स्कूल का आयेगा। जब हमारा रोल नम्बर निकट आने लगा, हमारी हालत खराब होने लगी। भय था कहीं ऐसा न हो कि परिणाम सुनाने वाला हमारा रोल नम्बर ही न बोले। पर ऐसा नहीं हुआ। हमारा नम्बर ठीक अपनी बारी पर आया। राजा चिल्लाया, ''असली बधाई अब है।'' उस के बाद मत पूछिये कि पास होने पर हमें कितना पैसा मिला और अली मीर ने कितनी मछली खाई। पर अफसोस, चमन रेडियो पर भी फेल ही था। मैं ने सोचा, हाय, यदि उसका पिता उसे हमारे साथ परबत आने देता, तो माँ शारिका उसे भी पास कर देती, ठीक उसी तरह जिस तरह उस ने हमें किया।

✷ ✷ ✷

कैटरपिलर

यह वैशाख का महीना था। पेडों पर नये पत्ते उग आये थे। कहीं कहीं शगूफे भी खिले हुये थे। मैं आठ बजे सुबह तैयार होकर क्वार्टर के बाहर लॉन में बैठा चाय पी रहा था। सोचा, जब तक चाय खत्म होती है तब तक टरबाईन वाली फाइल को एक बार फिर देख लूं। मैं ने फाइल के एक एक पन्ने को फिर से पलट कर देखा और कुछ महत्वपूर्ण बातें याद करने लगा। कहते हैं, घोड़े के पीछे और अफसर के सामने कभी नहीं आना चाहिये। घोड़ा पीछे की तरफ लात मारता है और अफसर देखते ही चिल्लाने लगता है। अगर चिल्लाने जैसी कोई बात नहीं हो तो भी कोई नया काम करने के लिये बोलता है।

आज मुझे केवल अपने ही अफसर के सामने नहीं जाना था बल्कि मुझे चीफ साहब के साथ भी मुलाकात करनी थी। भगवान जाने, किस बात पर खुश होगा और किस बात पर गुस्सा करेगा। इसलिये मैं इस कोशिश में था कि मैं उस के हर सवाल का जवाब दे सकूँ। बाद में कुछ भी हो, गुस्सा तो छोटे मुलाज़िम पर ही निकलता है ना!!

बात यह थी कि चेर्यवन में पावर हाऊस के टरबाईन में खराबी आने की वजह से बिजली की पैदावार बंद हो गई थी। पावर हाऊस के इंजिनियर लोगों की लाख कोशिश के बावजूद भी खराबी ठीक न हो सकी। इस लिये बाहर से एक ज़्यादा जानकार इंजिनियर को बुलाया गया जिस ने टरबाईन को ठीक करने के लिये एक प्लान तैयार किया। यह प्लान मंज़ूरी के लिये चीफ साहब के पास भेजा गया पर चीफ साहब ने आंख बंद करके इस प्लान को मंज़ूर करने से इनकार किया। उस ने फैसला किया कि टरबाईन का जायज़ा लेने के लिये वह खुद चेर्यवन का दौरा करेगा। चार दिन की प्रतीक्षा के बाद आज वह दिन आया जब चीफ साहब को खुद आना था। प्रोग्राम यह था कि चीफ साहब शहर से निकल कर थरगुंड, जहां डिविजनल आफिस था, कोई नव बजे पहुंचेंगे। चाय नाश्ता करके सब लोग चेर्यवन की तरफ रवाना होंगे। वहाँ चीफ साहब खुद हालात का जायज़ा लेंगे और बाहर से आये हुये इंजिनियर तिवारी साहब से भी मुलाकात करेंगे। उस के बाद सब लोग वापस थरगुंड आयेंगे जहाँ खाना खाने का इन्तज़ाम किया गया था। खाना खाकर टरबाईन की मरम्मत के लिये आपस में सलाह मशवरा किया जाना था।

चीफ साहब बराबर ग्यारह बजे थरगुंड पहुंचे। ईग्ज़ैक्यूटिव इंजिनियर मागरे साहब अपने मातहत अफसरों, जिन में जाला साहब असिस्टेंट ईग्ज़ैक्यूटिव इंजिनियर व तारिक साहब ॲसिस्टेंट इंजिनियर शामिल थे, के साथ सडक पर ही चीफ साहब का इन्तज़ार कर रहे थे। तिवारी साहब भी उन के साथ थे। सलाम दुआ और चाय नाश्ता करने के बाद सब लोग चेर्यवन की तरफ रवाना हुये। मैं मागरे साहब का टेक्निकल पी.ए. था इसलिये मेरा भी उन के साथ जाना ज़रूरी था। चीफ साहब के पीछे पीछे जीपों की एक कतार थी। मैं भी एक जीप में चढ़ गया। चेर्यवन

पहुंचते पहुंचते बारह बज गये। वहां प्राण नाथ जूनियर इंजिनियर व उनके दो वर्कस सुपरवाईज़र जमाल दीन व गफार डार सुबह के भूखे प्यासे चीफ साहब के इन्तज़ार में थे।

चीफ साहब इस इलाके में पहली बार आये थे। जीप से उतर कर उन्होंने इधर उधर देख कर इलाके का जायज़ा लिया। पावर हाऊस बहुत नीचे दरिया के पास था। हालांकि वहाँ तक पुख्ता सडक बनी हुई थी, फिर भी चीफ साहब ने पैदल जाना ही मुनासिब समझा। उन्होंने मागरे साहब को मुखातिब होकर कहा, ''यह देखो, क्या नज़ारा है? चारों तरफ गन्ना जंगल, ताज़ी हवा और साफ शफाफ पानी है। शहर में यह सब कहां मिलेगा? सुबह सुबह कोई यहाँ एक मील भी पैदल चलेगा तो एक महीने में दो सेर वज़न बढ़ा लेगा। ऐसा लगता है कि खुदा ने हमें यह एक नियामत बख्शी है।'' मागरे साहब ऊंची आवाज़ में हाँ में हाँ मिलाता रहा हालांकि सच यह था कि पिछले तीन साल में वह यहाँ सिर्फ दो बार आया था और पावर हाऊस तक सिर्फ एक ही बार गया था, वह भी जीप में। मागरे साहब के साथ साथ हम ने भी चीफ साहब की हाँ में हाँ मिलाई और इस तरीके से कदम उठाने लगे मानो हम उम्र भर ऐसा ही करते आये थे। दूसरे लोग भी हमारे पीछे पैदल चलने पर मजबूर हो गये।

हम मुश्किल से आधा मील चले होंगे जब चीफ साहब की नज़र दूर किसी चीज़ पर पड गई। पेड की एक टहनी ज़मीन पर गिरी हुई थी और चीफ साहब उस को गौर से देख रहे थे। हम ने भी उस तरफ देखना शुरू किया हालांकि नज़र कुछ भी नहीं आ रहा था। इतनी देर में चीफ साहब उस टहनी के बिलकुल करीब पहुंचे। सभी अफसर व दूसरे मुलाज़िम उन के पीछे पीछे थे। मैं आगे जाने के लिये दौड पडा। कहीं ऐसा न हो कि खाने वाली कोई चीज़ हो, सब खा लेंगे और मैं रह जाऊंगा! सब लोग चीफ साहब के इर्द गिर्द जमा हो गये। मैने तारिक साहब को इशारा किया ओर उस ने मेरे आगे जाने के लिये रास्ता बनाया। मैं ने देखा चीफ साहब नीचे झुक कर एक पत्ते को गौर से देख रहे थे। पत्ते पर दो बडे कैटरपिलर आराम कर रहे थे। एक हरे रंग का था, दूसरा शहतूती रंग का। धूप में दोनों चमक रहे थे। चीफ साहब ज़ोर से चिल्लाये 'कैटरपिलर' और मागरे साहब की तरफ देखने लगे। मागरे साहब ने कुछ इस तरह सिर हिलाया जैसे चीफ साहब ने कोई खोया हुआ खज़ाना ढूंढ निकाला हो। मागरे साहब ने अपने चेहरे पर ज़बरदस्ती एक मुस्कुराहट लाई और जाला साहब की तरफ देखने लगा। जाला साहब पहले से तैयार था। उस ने भी इस तरह सिर हिलाया मानो चीफ साहब की तेज़ नज़रों की दाद दे रहा हो। इस बीच सब लोग कैटरपिलर का दीदार करने एक एक कदम आगे आये और चीफ साहब को तारीफी नज़रों से देखने लगे। मैं ने सोचा, कहीं ऐसा न हो कि चीफ साहब इन सब की प्रमोशन करवा दें और मैं रह जाऊं? मैं ने हिम्मत जुटाई और ऊंची आवाज़ में मागरे साहब से पूछा, ''जनाब, इन को सब से पहले किस ने देखा?'' मागरे साहब ने अपने चेहरे पर नकली खुशी लाई और चीफ साहब की तरफ इशारा करते हुये बोला, ''चीफ साहब ने, और किस ने?'' चीफ साहब अब भी दोनों कीड़ों को बहुत गौर से देख रहे थे।

मैं चीफ साहब के सामने गया और उस को सुनाते हुये बोला, ''इन का रंग कितना अच्छा है! जी चाहता है दोनों को उठा कर जिगर में रख दूं।'' चीफ साहब ने अपना सिर उठाया और पूछा, ''आपका परिचय?'' मेरे पैरों के नीचे से ज़मीन खिसक गई। मैं ने सोचा, मर गये। बात करके मैं ने गलती तो नहीं की? मैं ने कहा, ''जनाब, मैं मागरे साहब का टेक्निकल पी.ए. हूं। चीफ साहब खडे हो गये। मुझे लगा जैसे वह थप्पड मारने वाले हों। मैं एक कदम पीछे हट गया। बाकी सब लोग तनाव में थे। चीफ साहब ने मेरा हाथ पकडा और कहा, ''ज़रा किसी को मेरी जीप में से कैमरा लाने को बोलो।'' मैं फूले नहीं समाया। मुझे कैमरा मंगाने के लिये बोल कर चीफ साहब ने जो अपनापन दिखाया था, उस से मेरी इज़्जत बढ गई। मैं ने कहा, ''जनाब, मैं खुद लेकर आता हूं।'' यह कह कर मैं जाने ही वाला था कि मागरे साहब ने गुस्से से मेरी तरफ देखा और मेरे कान में कहा, ''खुद क्यों जा रहे हो? जमाल को भेजो।'' उस के चेहरे से साफ दिख रहा था कि उसे मेरे साथ कोई हमदर्दी नहीं थी बल्कि उसे यह फिक्र थी कि कहीं मैं इस तरह चीफ साहब का खास न बन जाऊं। मेरा चेहरा लटक गया और मैं ने जमाल से कहा, ''जाओ, चीफ साहब की जीप में से कैमरा ले आओ।'' जमाल दीन दौड पडा।

चीफ साहब खडे खडे कुछ सोच रहे थे। वहाँ पर मौजूद हर अफसर के चेहरे से ऐसा लग रहा था जैसे वह भी सोच रहे हों। किसी को यह मालूम नहीं था कि दूसरा क्या सोच रहा है। कोई बीस मिनट हो गये, जमाल दीन वापस नहीं आया। चीफ साहब ने घड़ी देखी। एक बज रहा था। मागरे साहब की तरफ देख कर वह बोले, ''मुझे लगता है हम नीचे होकर आयें। वहाँ कितना समय लगेगा?'' मागरे साहब ने जाला साहब की तरफ देखा। जाला साहब बोला, ''बस जनाब, ज़्यादा से ज़्यादा आधा घंटा।'' सब पावर हाऊस की तरफ बढ़ने लगे। आगे आगे चीफ साहब और मागरे साहब, बाकी सब पीछे पीछे। चीफ साहब बीच बीच में मुड़ कर देख लेते कि कैटरपिलर अपनी जगह हैं कि नहीं? मागरे साहब ने गफार डार से कहा, ''तुम यहीं ठहरो। जमाल दीन जब कैमरा ले कर आयेगा, उस के साथ आना।''

पावर हाऊस के सामने एक पार्क थी। चीफ साहब को शायद पार्क पसंद आई। वह बोले, ''हमें नीचे जाकर क्या करना है? यहीं कुर्सियाँ लगवा लो।'' हुक्म की तामील हुई। चीफ साहब, मागरे साहब, तिवारी साहब व जाला साहब कुरसियों पर बैठ गये। बाकी सब खडे रहे। इतनी देर में पावर हाऊस के स्टाफ ने चाय व बिस्कुट लाकर रख दिये। सब चाय पीने लगे। मागरे साहब अपनी डायरी में कुछ लिखने लगे। चाय पीते पीते चीफ साहब ने बाहर से आये हुये इंजिनियर तिवारी साहब की तरफ देखा। तिवारी साहब ने ज्योंही चीफ साहब को अपनी तरफ देखते हुये पाया, उस ने तेज़ी से अपना ड्राईंग खोला और चीफ साहब के सामने रखा।

बिजली घर के टरबाईन में भारी खराबी हो गई थी, ऐसा तिवारी साहब का कहना था। चीफ साहब ने ड्राईंग पर हल्की सी निगाह डाली। तिवारी साहब विस्तार से बोलने वाला था कि टरबाईन में खराबी कैसे आई है और उसे किस तरह ठीक किया जा सकता है। जाला साहब के इशारे पर तिवारी साहब ने बोलना शुरू किया। मगर चीफ साहब मूड में नहीं थे। उन की जान

अब भी शायद कैटरपिलरों में अटकी हुई थी। उन्होंने मागरे साहब से कहा, ‘‘क्या यह बात हम बाद में नहीं कर सकते? खाना खाकर हमें और क्या करना है?’’ मागरे साहब ने तिवारी को इशारों इशारों में ही बताया कि टरबाईन वाली बात हम खाना खाने के बाद कर सकते हैं। तिवारी ने सिर हिलाया। इतनी देर में जमाल दीन कैमरा लेकर आ गया। उसे देख कर चीफ साहब को गुस्सा आया और बोले, ‘‘इतना समय तुम ने कैमरा लाने में लगाया? तुम्हारा नाम क्या है?’’ जमाल दीन पीला पड गया। वह कुछ न बोल सका। मागरे साहब ने कहा, ‘‘जवाब क्यों नहीं दे रहे हो? इतना समय कहाँ लगा? ’’ जमाल दीन बोला, ‘‘जिनाब, वहाँ चीफ साहब की गाडी ही नहीं थी। उन का ड्राईवर पास के गाँव में चाय पीने गया था और गाडी भी साथ लेकर गया था। मैं उस का ही इन्तज़ार कर रहा था।’’ इस के जवाब में न तो चीफ साहब कुछ बोला और न ही मागरे साहब। चीफ साहब ने कैमरा हाथ में लिया और मागरे साहब से बोले, ‘‘चलो, चलते हैं।’’ मागरे साहब ने कहा, ‘‘जनाब, टरबाईन को नहीं देखेंगे?’’ चीफ साहब बोले, ‘‘उस को देख कर अब क्या निकलेगा। आप ने तो देखा ही होगा।’’ मागरे साहब ने इकरार में सिर हिलाया हालांकि सच यह था कि उस ने टरबाईन को खराब होने के बाद एक बार भी नहीं देखा था।

चीफ साहब तेज़ कदमों से चलते रहे। पीछे पीछे पूरा कारवाँ मानो दौड रहा था। चूंकि वापसी पर चढाई थी, इसलिये हर एक की साँस फूल रही थी। आखिरकार हम सब उस जगह पहुंचे जहाँ हम कैटरपिलरों को छोड कर गये थे। मगर अफसोस!! टहनी अपनी जगह पर ही थी मगर कैटरपिलर कहीं नहीं थे। चीफ साहब इधर उधर दौडते रहे। उन के पीछे मागरे साहब दौडते रहे। मागरे साहब ने जाला साहब से कहा, ‘‘तुम उस तरफ ढूंढो।’’ जाला साहब उस तरफ ढूंढ़ने लगा और तारिक साहब को कहीं और ढूंढ़ने को कहा। मैं बुत बना हुआ था। सोच रहा था कि चीफ साहब खुद मुझे हुक्म देंगे। मगर ऐसा नहीं हुआ। अब मैं भी इधर उधर दैडने लगा, कैटरपिलर ढूंढ़ने के लिये कम और दिखावे के लिये ज़्यादा। मुझे पूरा यकीन था कि सब लोग ऐसा ही कर रहे थे। अचानक मेरी नज़र चीफ साहब के चेहरे पर पडी। वह पतझड के पत्ते की तरह पीला हो चुका था। हिम्मत करके मैं उन के सामने गया और बेचारगी के अंदाज़ में कहा, ‘‘जनाब, आप को यह कैटरपिलर किस लिये चाहिये थे?’’ चीफ साहब का चेहरा गुस्से से लाल हुआ। कैमरा अपने कंधे पर लटका कर बोला, ‘‘तुम्हें क्या लग रहा है, मुझे वह अपने घर ले जाने थे?’’ मेरी हवा निकल गई। मुझे सब के सामने रुसवा होना पडा। मागरे साहब को देख कर लग रहा था कि मुझे कच्चा ही चबा जायेगा। जाला साहब होंठों तले ही कुछ बडबडा रहा था। शायद मुझे कह रहा था कि तुम्हें बीच में बोलने की बीमारी क्यों है? मुझे यकीन हो गया कि चीफ साहब जो करें सो करें, लेकिन यह लोग मुझे ज़िंदा नहीं छोडेंगे।

‘‘नहीं जिनाब, मेरा मतलब वह नहीं था .. .. .. ’’ मैं ने चीफ साहब को सफाई देनी चाही। उन्होंने मेरी बात काट कर कहा, ‘‘बुरा हो उस टरबाईन का, उस की वजह ने समय निकल गया। इधर ही तो थे, कहाँ गये? समझ में नहीं आ रहा है।’’ चीफ साहब ऐसे बोले मानो टरबाईन की खराबी ढूंढ़ते ढूंढ़ते उन्हें दो दिन लग गये हूं। मगर उन की बात से मेरी हिम्मत बढी। यह बात साफ थी कि चीफ साहब मुझ से नाराज़ नहीं थे। नाराज़ होते तो मुझ से गुस्से में बात करते। मै

ने उन से कहा, ''जनाब, अगर आप कहें तो मैं कल कोई दूसरा कैटरपिलर ढूंढ कर निकालूंगा और उस की फोटो भी लूंगा। यहाँ पर ऐसे बहुत सारे मिल जाते हैं। मेरे पास तो कैमरा भी है।'' हकीकत में मेरे पास कैमरा नहीं था, मगर मैं ने सोचा कि ऐसा कहने से चीफ साहब समझ जायेगा कि मैं कोई छोटा आदमी नहीं हूं। और अगर कैमरा की ज़रूरत पड भी गई तो किसी से उधार लेकर काम चला लेंगे। मागरे साहब के पास भी तो कैमरा है, उसी से लेंगे। वह इनकार कैसे करेगा! मेरे लिये थोडे ही देना है, देना है चीफ साहब के लिये!!

चीफ साहब अब भी उदास थे मगर मेरी बात से उन्हें कुछ ढाढ़स मिला। उन्होंने मेरे कंधे पर अपना हाथ रखा। मैं, सच मानो तो आकाश छूने लगा। मैं ने जाला साहब और तारिक साहब की तरफ तीखी नज़र डाली। मतलब, मैं अब चीफ साहब का खास आदमी हूं। चीफ साहब ने मुझ से मेरा नाम पूछा। मैं ने अपना नाम बताया। उन्होंने कहा, ''मंज़ूर साहब ज़ोलोजी पढ़ता है। यह फोटो मुझे उस के लिये ही चाहिये था।'' फिर उस ने मागरे साहब से कहा, ''मैं जिधर भी जाता हूं यह कैमरा साथ लेकर जाता हूं। जहाँ कहीं कोई खास किस्म का कीडा या जानवर मिले, उस की फोटो खींचता हूं। ऐसे फोटो मंज़ूर साहब के बहुत काम आते हैं।'' मंज़ूर साहब शायद चीफ साहब के बेटे का नाम था। मागरे साहब ने शाबाशी देने के अंदाज़ में सिर हिलाया और कहा, ''जनाब, वह थोडे ही कोई ऐसा वैसा बच्चा है। वह बडा मेहनती है। कौन से साल में है?'' चीफ साहब के माथे पर सिलवटें आ गयीं। इधर उधर देखा और मागरे साहब से बोले, ''उस का फाईनल साल है। मगर आप उसे कैसे जानते हैं?'' मागरे साहब की सांस रुक गयी। उस ने कभी मंज़ूर साहब को देखा ही नहीं था। उस ने यह सब चीफ साहब को मस्का मारने के लिये कहा था। गलती हो ही गई थी पर जवाब देना ही पडा, ''जनाब, मैं ने उसे आप के साथ ही कहीं दावत में देखा है। शायद पिछले साल, कमिशनर साहब के बेटे की शादी पर!!'' चीफ साहब को यह बात रास नहीं आई। बोले, ''नहीं जी, कहां? उसे तो दो साल हो गये अम्रीका गये हुये।'' मागरे साहब का रंग फीका पड गया। हम सब के सामने उस की बे-इज़्जती हुई। फिर भी वह हिम्मत करके बोला, ''शायद मुझे गलतफहमी हुई हो।'' चीफ साहब ने कोई जवाब नहीं दिया। वह अब भी इधर उधर देख रहा था कि शायद कहीं कैटरपिलर नज़र आये। थोडी देर के बाद मागरे साहब ने चीफ साहब से कहा, ''चलिये, अब चलते हैं। खाना ठंडा हो रहा होगा।'' चीफ साहब ने घड़ी की तरफ देखा। चार बज चुके थे। बोले, ''हाँ चलिये। बाद में डिसकशन में भी समय लगेगा।''

मागरे साहब ने चीफ साहब के लिये बडी ज़ियाफतें बनवायी थीं। पूरा वाज़ुवान लगाया गया था। एक रुपये की जगह दो खर्च किये गये थे जबकि हिसाब में चार लिखे जाते। यह सारा खर्चा किसी न किसी अकाउंट में किसी दूसरे तरीके से डाला जाता जिस की मंज़ूरी चीफ साहब आँख बंद करके दे देते। चीफ साहब को खाना बहुत अच्छा लग रहा था। बाकी अफसर व मुलाज़िम भी मज़े ले लेकर खा रहे थे। खाने का बाद केसरी कहवा पेश किया गया। इतनी देर में छः बज गये।

चीफ साहब ने फिर घड़ी देखी और मागरे साहब से बोले, ''बहुत देर हो गई। ज़रा देखिये मेरा ड्राईवर कहाँ गया। पता नहीं उस ने कुछ खाया या नहीं? उसे कहिये अब निकलना है।'' मागरे साहब ने कहा, ''जी हाँ, उस ने खाना खाया है। यह तिवारी साहब भी इन्तज़ार में हैं। इस से बात करनी है ना?'' चीफ साहब को मागरे साहब की यह बात अच्छी नहीं लगी। बोले, ''छोडिये, अब उस से क्या मगज़मारी करनी है? उसे काम करने दो। वह गलत थोडे ही बोलेगा?'' तिवारी साहब एक तरफ बैठ कर कुछ लिखने में व्यस्त था।

चीफ साहब शहर की ओर चल पडे। मैं ने मागरे साहब से कहा, ''आज का दिन अच्छा निकला। चीफ साहब ने भले ही कुछ देखा हो या न देखा हो, मगर प्लान को मंज़ूरी देकर गया। हमें और क्या चाहिये था? '' मागरे साहब ने हां करके सिर हिलाया। जाला साहब की तरफ देख कर उस ने कहा, ''पता नहीं यह कैटरपिलर कहाँ से पैदा हुये? मुझे चीफ साहब से और भी दो तीन खर्चे का अप्रूवल लेना था, वह तो रह ही गया। पर एक राज़ की बात बताता हूं। यह कैमरा जो उस के पास था सरकारी है। मैं सोच रहा था कि वह इस कैमरा से हमारा और टरबाईन का फोटो लेगा, पर कहाँ? उस ने तो यह कैमरा कीड़े मकोड़ों के फोटो लेने के लिये रखा है। अब बताओ, क्या कहें? ''

चीफ साहब के जाने के बाद तिवारी साहब सामने आया। उस के हाथ में अब भी टरबाईन का ड्राईंग था। मागरे साहब ने उस से कहा कि अब डिसकशन करने की कोई ज़रूरत नहीं है और वह अपना काम शुरू कर सकता है। तिवारी साहब हैरान व परेशान था। उस की समझ में नहीं आ रहा था कि कागज़ देखे बिना ही अप्रूवल कैसे मिला। वह कभी मागरे साहब को देखता और कभी अपने ड्राईंग को। ठीक उसी तरह जिस तरह मैं कभी उस को देखता था और कभी अपनी फाईल को, जिसे मुझे एक बार भी खोल कर देखने की ज़रूरत नहीं पडी।

✹ ✹ ✹

बिन बुलाये मेहमान

कालेज से घर आते हुये जब हम देवान बाग पहुंचे, हमारी नज़र बहुत दूर एक मंडप पर पडी। मंडप नया और रंगदार था। विजय ने मेरी तरफ तीखी नज़र डाली। बोला, ''लगता है किसी की शादी हो रही है। मैं ने बहुत समय से शादी की दावत नहीं खाई है।'' मैं ने भी हाँ कर ली। शादी की दावत की बात सुन कर हमेशा मेरे मुँह में पानी भर आता था। विजय ने मेरे कन्धे पर हाथ रखा और बोला, ''क्या खयाल है?'' मेरी समझ में कुछ नहीं आया। ऐसे मामलों में मैं बहुत बेवकूफ था। मैं ने पूछा, ''किस बारे में?'' विजय बोला, ''आगे बढ़ो, फिर बताता हूँ।''

आधे मील से कुछ कम चल कर हम मंडप के पास पहुँचे। यह मंडप सडक के एक हिस्से पर लगाया गया था। दो तीन आदमी कनात बांध रहे थे और कुछ आदमी मंडप के अंदर कालीन बिछा रहे थे। बाहर कई नवजवान लडके इधर उधर दौड रहे थे और पांच छः बुज़र्ग आपस में बातें कर रहे थे। मैं यह सब देखने में व्यस्त था। मंडप के अंदर तीन लडके बंटिंग लगा रहे थे मगर वह यह काम ढंग से नहीं कर पा रहे थे। मेरे मन में आया कि मैं उन्हें सही तरीका बता दूं मगर विजय का चेहरा देख कर मैं चुप रहा। वह अक्सर मुझे यह कह कर झाड देता कि मैं बे-वजह हर काम में अपनी टांग अड़ाता रहता हूं।

विजय ने मुझे एक जगह ठहरने का इशारा किया और खुद मंडप के अंदर घुस गया। जब वह बहुत समय तक वापस नहीं आया, मैं उसे ढूंढने गया। वह मुझे कहीं नहीं मिला। मंडप के अंदर से ही मकान में जाने का रास्ता था, पर मुझे उस तरफ जाना ठीक नहीं लगा। कोई पंद्रह मिनट बाद विजय वापस आया और बोला, ''मैं ने सब पता लगा लिया है। किसी गोपी नाथ के बेटे की शादी हो रही है। आज मेहंदीरात है इसलिये बढ़िया मांसाहारी दावत का इन्तज़ाम किया गया है। मुझे पता चला है कि माँस के कोई आठ व्यंजन पकाये गये हैं। आचार और दही के प्याले भी हैं।'' ''पर तुम्हें यह सब बताया किस ने?'' मैं ने पूछा। वह बोला, ''मैं ने मंडप लगाने वाले से दोस्ती बढ़ायी, उसी ने बताया। वह यह भी बोल रहा था कि यह लोग बहुत पैसे वाले हैं।''

दही के प्याले की बात सुनते ही मेरे मुँह में पानी आया। मुझे बचपन से ही दही खाने की बहुत कमज़ोरी थी। इस से पहले कि मैं कुछ और सोचता, विजय ने मेरा हाथ पकड कर कहा, ''मैं ने बहुत कोशिश की कि कोई पहचान वाला मिले पर ऐसा नहीं हुआ। फिर भी कोई फिक्र नहीं। अगर तुम हिम्मत करोगे तो हम भी दावत खा सकते हैं। वहाँ थोडे ही कोई हमारा हाथ पकड कर पूछने वाला है कि तुम लोग कौन हो? सब सोचेंगे कि किसी न किसी के रिश्तेदार होंगे।'' मैं ने कोई जवाब नहीं दिया। मैं दरअस्ल बहुत डरपोक किस्म का आदमी था। बिला वजह किसी झमेले में नहीं पडना चाहता था। विजय को मेरी चुप्पी से मेरा जवाब मिल गया और वह आगे नहीं बोला। इस के बाद हम घर की तरफ चलने लगे।

बस्ता अपने अपने घर में रख कर हम सीधे निका के पास पहुंचे। वह अपने पतलून पर इस्त्री कर रहा था। हम ने उस के सामने पूरे दिन की रिपोर्ट पेश की और साथ ही मंडप के बारे में भी बताया। जब विजय ने कहा कि किसी गोपी नाथ के लडके की शादी है, निका सोच में पड गया। बोला, ''ऐसा कहो ना कि सतीश के भाई की शादी है।'' ''कौन सतीश?'' हम ने पूछा। निका ने कोयले की इस्त्री एक सलेटी पत्थर पर रखी और बोला, ''क्या यह मंडप गोल मज़ार के पास सडक की बाईं ओर नहीं था?'' हम ने हाँ करके सिर हिलाया। उस ने कहा, ''वहीं पर तो वली का मकान है। गोपी नाथ वली सतीश का बाप है। कुछ समझ में आया क्या?'' मैं ने फिर पूछा, ''यह सतीश कौन है?'' उस ने जवाब दिया, ''सतीश मेरे साथ एस.पी.कालेज में पढ़ता है। तुम लोग उसे नहीं जानते हो!'' यह कह कर निका ने इस्त्री किया हुआ पतलून खूंटी पर टांग दिया और कमीज़ पर इस्त्री करने लगा। हमारी तरफ देख कर वह बोला, ''तुम लोग भी अपने अपने कपडे तैयार करो, दावत में जाना है ना!'' मैं ने पूछा, ''हमें कैसी दावत है?'' निका वापस बोला, ''ऐसे ही समय में तुम बेवकूफी की बातें करते हो। मैं ने कहा ना कि सतीश के भाई की शादी है और सतीश मेरा दोस्त है। उस ने मुझे पिछले हफ्ते ही दावत पर आने की बात कही थी पर मैं भूल गया था। तुम लोगों को भी मेरे साथ आना है।'' यह सुन कर मैं बहुत खुश हुआ। मैं ने बहुत समय से शादी की दावत नहीं खाई थी। मैं ने सतीश और निका के लिये दुआऐं की। विजय भी बहुत खुश था। वह बोला, ''मैं तो बिन बुलाये भी जाने को तैयार था। यह अच्छा हुआ कि अब इज़्जत के साथ जाना होगा।'' निका को वह इस तरह देख रहा था जैसे उस ने विजय की सात पीढियों पर कोई बडा एहसान किया हो।

दावत आठ बजे की थी पर हम सात बजे ही पहुंच गये। इन्तज़ाम करने वाले इधर उधर भाग रहे थे। मंडप के बाहर एक जगह कुरसियाँ रखी हुई थीं जिन पर बैठ कर कुछ बुज़र्ग लोग सियासत पर बहस कर रहे थे। 'शेख अब्दुल्लाह ने क्या कहा और मीर कासिम ने क्या कहा?' हमें उन की बातों में कोई दिलचस्पी न थी। हम उन से दूर ही खडे रहे। मैं ने निका से पूछा, ''सतीश कहाँ है?'' उस ने कहा, ''तुम इधर ही रुको, मैं उस को ढूंढता हूं।'' पता चला सतीश काम में मशगूल है। निका ने वापस आकर कहा कि वह वुरबल (रसोई) में कुछ कर रहा है।

जो लोग अंदर बाहर कर रहे थे, उन में से किसी किसी को निका नमस्कार करता था। वह भी जवाब में नमस्कार करते थे। कोई कोई उस से पूछता, ''कहो बेटे, क्या हाल है?'' हम बीच बीच में निका से पूछते कि वह आदमी कौन है और यह आदमी कौन है? निका हमें बताता कि वह सतीश का मामा है और यह उस का चचेरा भाई। हम समझ गये कि निका इन लोगों को बहुत करीब से जानता है।

साडे आठ बजे के बाद महमान आने लगे। पहले ही झुंड के साथ हम भी अंदर घुस गये। अंदर खाना खाने के लिये टाट पट्टी बिछी हुई थी। निका दौड कर एक कोने में जाकर बैठ गया और हमें भी वहीं आने का इशारा किया। आधे घंटे में जगह भर गयी।

दो लडके मेहमानों के हाथ धुलाने के लिये आगे आगे थे। उन के पीछे थालियाँ लगाने वाले थे। ज्योंही रोगनजोश डालने वाला आदमी मेरी थाली के पास पहुँचा, मैं ने कहा, ''जी मैं शाकाहारी हूँ।'' उस ने रोगनजोश का टुकडा वापस अपनी थाली में डाला। मेरी तरफ अजीब सी नज़रों से देखा और कहा, ''इतना छोटा और शाकाहारी! तुम ने अभी अभी कोई परीक्षा दी है क्या?'' मैं ने कहा, ''जी नहीं। मैं बचपन से ही शाकाहारी हूं।'' मेरे साथियों ने मेरी हाँ में हाँ मिलायी।

रोगनजोश वाले ने दूर खडे एक आदमी को आवाज़ दी, ''हे गाशु लाल।'' गाशु लाल उस की तरफ देखने लगा। उस आदमी ने कहा, ''यहाँ एक शाकाहारी है।'' गाशु लाल ने किसी और आदमी से बात की और फिर रोगनजोश वाले से बोला, ''बाल जी। ज़रा देखो, कोई और भी शाकाहारी है क्या?'' इतनी देर में बाल जी के पीछे व्यंजन परोसने वालों की लाईन लग गयी। मेरी बाईं ओर जो आदमी बैठा था, उस ने मुझे कहा, ''यह तुम ने कौन सी मुसीबत खडी कर दी? अरे शाकाहारी था तो दावत खाने ही क्यों आया?'' मुझे उसकी यह बात अच्छी नहीं लगी। मैं ने कहा, ''हम क्या खुद आये हैं? हमें सतीश ने बुलाया है।'' वह आदमी कुछ और कहने ही वाला था कि बाल जी ने ऊंची आवाज़ में बैठे हुये लोगों से पूछा, ''कोई और भी शाकाहारी है क्या?'' चार आदमियों ने हाथ खडे किये। बाल जी ने गिनना शुरू किया, 'एक, दो, तीन, चार'। फिर गाशु लाल से कहा, ''चार हैं।'' गाशु लाल ने एक और आदमी से मशवरा किया और हमें बोला, ''चलिये, सब शाकाहारी इस तरफ को हो जाइये।'' इस के बाद उस ने उस तरफ बैठे हुये लोगों से विनती की कि वह वहाँ शाकाहारी लोगों को बैठने दें और वह इन की जगह आयें।

बैठे हुये लोगों में अफरातफरी मच गयी। कुछ लोग इधर से उधर जाने लगे और कुछ लोग उधर से इधर आने लगे। इस कार्रवाई में कोई पाँच मिनट लग गये। उस के बाद व्यंजन परोसने का काम फिर शुरू हुआ।

नई जगह पर बैठते बैठते हमारे साथ दो और आदमी जुड गये। अब हम छः हो गये। हाथ धुलाने वाला माँसाहारी लोगों के हाथ धुलाने के बाद ही हमारी तरफ आया। कुछ देर के बाद हमारे सामने थालियाँ रखी गईं। हमारे ओर कोई भी आदमी थालियाँ साफ करने के लिये नहीं आया। हम में से एक आदमी, जो बडी उम्र का था, ने जेब से रुमाल निकाल कर अपनी थाली साफ की। बाकी लोगों ने भी ऐसा ही किया। मैं ने अपनी जेब में हाथ डाला। मैं रुमाल लाना भूल ही गया था। मेरे साथ बैठा हुआ आदमी दिल वाला था। उस ने अपनी रुमाल से मेरी थाली भी साफ की। मैं ने उस की तरफ मुस्कुरा कर देखा ... मतलब 'शुक्रिया'।

अब हम व्यंजन परोसने की प्रतीक्षा कर रहे थे मगर हमारे मामले में देर हो रही थी। मैं ने निका की मांसाहारी लाईन को देखा। वहाँ परोसने वालों का तांता बंधा हुआ था ... रोगन जोश, मछ़, च़ोक च़रवन, हाख, मूली की चटनी, नदुर्य चुरमु आदि। वहाँ पर चावल बांटना भी शुरू हो गया। पीछे पीछे 'कलिया' परोसने वाला भी आ गया। पर हमारी थालियाँ अभी भी कोरी साफ थीं और परोसने वालों का कहीं पता नहीं था।

इन्तज़ाम करने वाले लोग इधर से उधर और उधर से इधर भाग रहे थे मगर उन में से कोई भी हमारी तरफ नहीं देखता था। मैं उस दिन को कोसने लगा जिस दिन में शाकाहारी बना था। दर असल मुझे शाकाहारी बनने का शौक नहीं था मगर मेरी जन्म कुण्डली देख कर काकु महाराज ने मुझे माँस खाने से मनाह किया था। मुझे उस के शब्द आज भी याद थे। जब मेरी माँ ने मेरी जन्म कुण्डली उस के सामने रखी, तो एक नज़र देख कर ही काकु महाराज ने उसे बताया, ''बच्चे का समय थोड़ा खराब है। दो बातें याद रखो। एक यह कि हर बृहस्पतिवार को वह आग में डाल कर दूध जलाये और दूसरा यह कि वह माँस खाना छोड दे। इस के बाद तुम देखना वह क्या से क्या बनेगा। तुम्हें भी वह फर्श से उठा कर अर्श पर पहुंचा देगा।'' मैं अंदर ही अंदर जल रहा था। घर में आठ आठ दिन के बाद खाने में गोश्त का एक टुकडा मिलता था, वह भी बंद हो गया। मेरी माँ काकु महाराज से बहुत डरती थी। वह उसके ससुर का बडा भाई था। नतीजा यह निकला कि मुझे ज़बरदस्ती शाकाहारी बनना पडा।

काकु महाराज की इस बात को थोड़ा ही समय हुआ था कि गाडु बतु (घर देवता को मछली और भात खिलाने का पर्व) का समय आ गया। मेरे ननिहाल वाले गाडु बतु बहुत धूम धाम से मनाते थे। मेरी नानी उस दिन अपने सब नज़दीकी रिश्तेदारों को खाने पर बुलाती थी। घर में जैसे मेला लगता था। बडे तो अलग, हम बच्चे ही सोलह सतरह हुआ करते थे। मेरी नानी अपने हाथों से मछली पकाती थी। वह मछलियों के साथ मूली भी डालती। आदमी खाना खा कर आधे घंटे तक थाली को चाटता रहता। मैं अपनी नानी का बडा प्यारा था। वह मछली का एक टुकडा मेरे दूसरे दिन के खाने के लिये सम्भाल कर रखती थी। जब मैं इस बारे में उस से पूछ लेता तो वह सौ सौ बार मेरी बलायें लेती।

पर इस साल का गाडु बतु मुझे सदा के लिये याद रहा। मुझे हाक और स्वच़ल के साथ खाना दिया गया। सब लोग मज़े ले लेकर मछली खा रहे थे। मैं हर खाने वाले के मुंह को तकता रहा और आहें भरता रहा। मेरी हिम्मत बढाने के लिये मेरी माँ ने भी उस दिन मछली नहीं खाई। रात हो गई और सब सो गये। मेरी आंखों में नींद नहीं थी। मुझे हर तरफ मछलियाँ ही मछलियाँ दिखायी दे रही थीं। जब बेकरारी बहुत बढ़ गई तो मैं उठ खडा हुआ और चुपचाप किचन में घुस गया। सब लोग मस्त नींद में थे। मैं ने मछली का एक टुकडा कागज़ में लपेट कर निकाला और बिस्तर में बैठ कर चुप चाप खाने लगा। मगर मेरी किस्मत खराब थी। मछली का एक कांटा मेरे गले में अटक गया। पहले तो मैं ने अपने आप को सम्भाला और आवाज़ किये बिना ही खांसने लगा। जब उस से कुछ फायदा नहीं हुआ तो मैं ज़ोर से चिल्लाया। मेरी चीख सुन कर सब लोग जाग गये। फिर कितना बडा तूफान खडा हो गया, यह मत पूछो। सूखे चावल खिलाकर मेरे गले में अटका कांटा तो निकाला गया पर मुझे बहुत मार पडी। मेरी नानी को न ही मेरा मछली खाना अच्छा लगा और न ही मेरा मार खाना। उस ने जैसे तैसे मुझे और पिटने से बचा लिया। काकु महाराज की बात को न मान कर मेरा बुरा ही हुआ। मैं उस साल फेल हो गया। उस दिन के बाद मैं पूरा शाकाहारी बन गया।

मेरे खयालों को झटका लगा। गाशु लाल एक दूसरे आदमी को साथ में लाया और उसे बोला, ''शिबन जी, थालियाँ उठाओ।'' शिबन जी सब थालियाँ उठा कर ले गया। मैं ने अपने साथ वाले की तरफ देखा। वह समझ गया कि थालियाँ उठाने की वजह से मैं कुछ परेशान हुआ हूं। उस ने मेरे कान में कहा, ''हम थोडे ही लोग हैं ना! इसलिये वह वुरबल से ही थालियाँ परोस कर लायेंगे।'' मेरी जान में जान आई। शायद गाशु लाल ने ऐसा पहले ही कहा होगा और चूंकि मैं मछलियों के मामले में खोया हुआ था इसलिये मैं ने सुना नहीं होगा।

दस पंद्रह मिनट के बाद तीन आदमी हमारी थालियाँ लेकर आ गये। दमु ओलुव,व्ज़ुज च़ामन, लॆदुर च़ामन, च़ोक्य वांगन, नदुर्य आदि के अलावा नदुर्य चुर्मु और म्वंजि आंचार भी था। थाली मुझे तक रही थी और मैं थाली को तक रहा था। मैं ने फट से खाना शुरू किया। इस बीच मुझे निका पर नज़र पडी। वह दूसरा बडा रोगनजोश लेकर बांटने वाले से इसरार कर रहा था कि विजय को भी एक और रोगनजोश देदो। विजय दूसरा रोगनजोश लेने पर मजबूर हुआ।

हमारी थालियाँ रखने के बाद हमारे पास कोई आदमी यह पूछने नहीं आया कि आप लोग कुछ लेंग तो नहीं? सब लोग माँसाहारी लोगों की मेहमान नवाज़ी कर रहे थे। मुझे याद आया, दही का प्याला तो आया ही नहीं। मैं ने एक आदमी को बुला कर कहा, ''माहरा, आप लोग दही का प्याला ही लाना भूल गये हैं।'' उस ने यह बात दूसरे को बता दी और दूसरे ने तीसरे को। अचानक मेरी नज़र गाशु लाल पर पडी। मै उस के पास गया और कहा, ''माहरा, हमें दही का प्याला ही नहीं मिला।''

गाशु लाल ने मुझे तीखी नज़रों से देखा। बोला, ''दही के प्याले तो हैं ही नहीं?'' मैं ने कहा, ''माहरा, हम ने कुछ देर पहले ही वुरबल में जाकर पता किया है। दही के प्याले हैं।'' गाशु लाल का चेहरा लाल हो गया। उस ने मेरे कंधे पर हाथ रखा और बोला, ''बेटे, बात यह है कि दो ही सौ प्याले बनाये थे। पहली ही जमात में ढाई सौ लोग आ गये। किसी को दें और किसी को न दें, ऐसा कैसे हो सकता था? इसलिये हम ने फैसला किया कि दही के प्याले नहीं देंगे। आजकल एक अजीब सी बात हो रही है। जिन को दावत दी जाती है, वह बाद में आते है। पर जिन को दावत नहीं दी जाती, वह पहले आ जाते हैं। अब तुम ही बोलो, जो कुछ पकाया गया है, वह पूरा कैसे पडेगा।'' मेरी हालत देखने के काबिल थी। मेरा मासूम चेहरा देख कर गाशु लाल मेरे कान में बोला, ''मुझे लग रहा है कि मेरे रवी जी की तरह तुम्हें भी दही बहुत प्यारा है। तुम खाना खा लो, मैं तुम्हें चुपके से एक प्याला दे देता हूँ। पर खबरदार, किसी को मत बताना। घर जाकर खा लेना।'' मैं ने उसे यकीन दिलाया।

मैं वापस अपनी थाली के पास पहुँचा। मन बहुत परेशान था। ''कहीं ऐसा न हो कि गाशु लाल मुझे दही दिये बिना ही निकल जाये?'' पर मैं ने अपने आप को दिलासा दिया, ''नहीं नहीं, ऐसा नहीं होगा। गाशु लाल बहुत अच्छा आदमी है।''

मुझे गाशु लाल की बात बार बार याद आती थी। सच भी है, जब किसी को बुलाया ही नहीं जाता है तो बिन बुलाये दावत खाने का क्या मतलब है? क्या यह अपनी बे-इज़्जती कराने के बराबर नहीं है? पर लोग ऐसा क्यों करते हैं, यह मेरी समझ में नहीं आया।

खाना खाने के बाद मैं बाहर निकला। मेरे दोस्त भी आ गये। मैं ने गाशु लाल को ढूंढना शुरू किया मगर वह नहीं मिला। मैं ने एक आदमी से पूछा, ''माहरा, गाशु लाल किधर है?'' उस ने मेरी बात का जवाब तो नहीं दिया पर मेरे सिर पर हाथ रख कर बोला, ''क्या तू जिगरी का लडका है?'' मेरे बदले निका ने जवाब दिया, ''हां जी हाँ।'' इस से पहले कि वह आदमी फिर कुछ पूछता, निका ने मेरा हाथ पकडा और मुझे एक तरफ ले जाकर बोला, ''तुम हर बात को लम्बा क्यों कर रहे हो। चलो चलते हैं।'' मैं ने कहा, ''हम निकलेंगे तो क्या गाशु लाल मुझे ढूंढते ढूंढते परेशान नहीं होगा? और सतीश से भी तो मिलना है!'' निका कुछ बोलने ही वाला था कि वह आदमी फिर हमारे पास आया जिस ने मुझे जिगरी का बेटा कहा था। मैं ने उस से पूछा, ''माहरा, सतीश कहाँ है?'' ''कौन सतीश?'' उस ने कहा। निका फिर बीच में आया और बोला, ''वह हमारा एक दोस्त है। अभी इधर ही था। '' यह कहते हुये निका ने मुझे फिर बाज़ू से पकडा और घर की तरफ ले गया। मेरा दही का प्याला रह गया।

रास्ते में विजय ने निका से पूछा, ''हमें सतीश से क्यों नहीं मिलाया? हम भी उसे मुबारकबाद देते।'' निका को गुस्सा आया। बोला, ''तुम पागल तो नहीं हो गये हो? कौन सतीश और किस का दोस्त?'' हमारा चेहरा लटक गया। मैं ने कहा, ''तुम क्या कह रहे हो? सतीश तुम्हारा दोस्त नहीं है?'' ''अरे, कौन दोस्त? किस का दोस्त? तुम लोगों को दावत खाने की इच्छा हुई थी और मैं ने वह इच्छा पूरी की। यह क्या गलत किया?''

मेरे चेहरे का रंग बदल गया। ''मगर तुम ने हमें सच क्यों नहीं बताया? इस का मतलब है कि हम सचमुच ही बिन बुलाये मेहमान थे।'' निका बोला, ''अगर मैं तुम लोगों को सच बताता तो तुम कहाँ आते? मुझे भी बहुत समय हो गया था शादी की दावत खाये हुये। जब तुम लोगों ने मंडप की बात की तो मैं ने सोचा अच्छा मौका है।''

बिन बुलाये मेहमान के तौर पर दावत खाकर मैं बहुत उदास हुआ। अब मुझे समझ में आया कि दही के प्याले क्यों कम पड रहे थे। उस की वजह असल में हम ही थे। निका ने मेरे सिर पर हाथ फेरा और कहा, ''परेशानी छोड़ो। इन बातों में ज़्यादा ध्यान नहीं देना चाहिये।'' मैं ने कहा, ''मुझे वह परेशानी नहीं है। मैं सोच रहा हूं कि कहीं गाशु लाल दही का प्याला लेकर हमें ढूंढता हुआ यहाँ तक न आ पहुंचे।''

✷ ✷ ✷

शेर का शिकार

मामला बहुत संजीदा था। सच पूछो तो मेरे चेहरे का रंग कब का पीला पड़ चुका था, फिर भी मैं बहादुर होने का ड्रामा कर रहा था। हमारी टीम में सब से अच्छी सेहत वाला लडका गुलाम रसूल था। वह मन ही मन में कुछ पढ़ रहा था। मैं ने ज्योंही उसे छेडा, वह पागल कुत्ते की तरह मुझ पर टूट पडा मगर ज़बान से कुछ न बोला। जलाल दीन और राज नाथ एक दूसरे को इस तरह पकडे हुये थे मानो उम्र भर अलग न होने की कसम खाई हो। जय कौल हिम्मत बटोरने के लिये सिग्रेट के कश ले रहा था, इस बात से बे-खबर कि सिग्रेट सुलगाया ही नहीं है। मुनीर अहमद कुछ सोच रहा था, शायद हालात का जायज़ा ले रहा था। वह टीम लीडर था इसलिये पूरी ज़िम्मेदारी उस के ऊपर थी। हनीफ खान का चेहरा लाल था पर मुँह से कुछ बोल ही नहीं पा रहा था। मेरी समझ में यह नहीं आ रहा था कि वह खौफ से लाल हुआ है कि उसे जोश आया है।

तम्बू का एक कोना उठा कर मुनीर अहमद ने फिर बाहर की तरफ देखा। जिगर थाम कर मैं भी एक छोटी सी दरार से बाहर देखने लगा। शेर की आंखें चमक रही थीं और वह हमारी ही तरफ देख रहा था। खौफ की वजह से मुझे शेर की एक ही आँख दिखाई दे रही थी पर मुनीर अहमद का कहना था कि दोनों आंखें चमक रही हैं। किसी को भी बोलने की इजाज़त नहीं थी। हम सब इशारों इशारों में ही बात कर रहे थे। मुनीर अहमद के कहने पर मैं ने फिर एक बार बाहर देखा। अब मुझे भी शेर की दोनों आंखें बराबर दिखाई दे रही थीं। राज नाथ ने भी इस बात की तायीद की। जलाल दीन को शेर की आंखें तो नहीं दिख रही थीं मगर उसे उस के पानी पीने की आवाज़ साफ सुनाई दे रही थी। जलाल दीन ने हमारे कान में कहा, ''बा-खुदा, शेर पानी को हिला हिला कर पी रहा है। मैं यहाँ बैठ कर भी उस की आवाज़ बराबर सुनता हूं।'' जय कौल को उस की बात रास नहीं आई। उस ने कहा, ''मैं ने फिल्मों में देखा है, शेर कभी भी पानी को हिला हिला कर नहीं पीता है।'' जलाल दीन उसे कुछ बोलना चाहता था मगर मुनीर अहमद को देख कर चुप हो गया। हम ने एक बार फिर दरार में से देखा। बाहर पूरा अंधेरा था पर हम आंखें मूंद मूंद कर यह देखने की कोशिश कर रहे थे कि आगे क्या होगा ?

राज नाथ को पीछे ढ़केल कर मैं आगे आया। मैं ने देखा, शेर सचमुच पानी पी रहा था। पानी पीने के बाद वह खड़ा हो गया और एक अंगडाई ली। उस का कद देख कर मैं डर गया। हालांकि अंधेरे में साफ नहीं दिखाई दे रहा था मगर फिर भी मेरे अंदाज़े के मुताबिक उस का कद छः फुट था। मैं ने ज्योंही उस की अंगडाई लेने की बात मुनीर अहमद को बताई, उस ने भी डरते हुये दरार में से झाँका। पहले पहले तो उस को कुछ भी दिखाई नहीं दिया। वह अब भी समझ रहा था कि शेर पानी पी रहा है। पर जब उस ने ध्यान से देखा तो उसे भी शेर खडा हुआ दिखाई दिया। उस के कहने के मुताबिक शेर चार ही फुट लम्बा था।

अचानक गुलाम रसूल के मुँह से चीख निकल गई, ''अरे मर गये।'' उसकी चीख सुन कर हम एक दूसरे पर गिर पड़े। किसी की भी समझ में नहीं आया कि गुलाम रसूल क्यों चीखा। जब मुनीर अहमद ने उस से पूछा, उस ने हैरान होकर कहा, ''आप लोगों ने शेर की दहाड नहीं सुनी?'' मैं ने और मुनीर अहमद ने इनकार में सिर हिलाया पर जलाल दीन ने इकरार किया। कहा, ''बा-खुदा, मैं ने खुद भी शेर की खतरनाक दहाड़ सुनी थी पर मैं इसलिये चुप रहा कि तुम लोग डर जाओगे।'' जलाल दीन की बात सुन कर हमारी आधी जान निकल गई। इस का मतलब साफ था कि शेर हमें खाने की तैयारी कर रहा था। जय कौल ने अब सिग्रेट ज़मीन पर रखा था। शायद उसे एहसास हो गया था कि सिग्रेट सुलगाया ही नहीं था।

मैं ने उस समय को कोसना शुरू किया जब मैं मुनीर अहमद की बातों में आकर उस के साथ एडवांचर करने निकला था। दिल ही दिल में मैं ने अपने माता पिता से माफी माँगी कि मैं आप लोगों के लिये कुछ न कर सका और अब पच्चीस साल की उम्र में ही शेर के हत्थे चढ रहा हूँ। मेरी आँखों से आँसू निकल पड़े। एक एक करके मुझे मेरे सब यार दोस्त व रिश्तेदार याद आने लगे। देखते देखते मैं दहाडें मार मार कर रोने लगा। मुझे देख कर सब मेरे साथ साथ रोने लगे। हमारा आखिरी समय आ गया था इसलिये हम सब ने एक दूसरे को कस कर पकड लिया। मैं मन ही मन यँद्राखी का पाठ पढने लगा।

टीम में हम कुल आठ आदमी थे। इन में छः यानी मुनीर अहमद, गुलाम रसूल, जय कौल, राज नाथ, जलाल दीन और मैं एडवेंचर करने वाले थे और दो यानी हनीफ खान व कसाना कुली थे। असल में हम कुल ग्यारह आदमी होने चाहियें थे पर मेरे तीन दोस्त जो हमेशा मेरे साथ ही हुआ करते थे, इस बार मेरे साथ नहीं आये। कहने को तो उन्होंने कह दिया कि वह किसी काम में व्यस्त हैं पर मुझे पूरा यकीन था कि वह जंगल की तरफ जाने से डरते थे। मेरे लाख मनाने के बवजूद भी वह नहीं माने और हमारे साथ आने सा साफ इन्कार किया।

आधे रास्ते में पहाडी की चढाई चढते हुये एक गडबड हो गई। एक दो-रास्ते पर हनीफ खान और कसाना हम से बिछड़ गये। हम आगे थे और हम एक रास्ते से निकल गये। वह कुछ देर बाद पहुंचे और दूसरे रास्ते से निकल गये। इस बात का हमें उस समय पता नहीं चला। जब हम दोपहर को एक छोटी मर्ग (पहाडी पर एक बडी समतल जगह) पर पहुंचे, तो अपनी प्यास बुझाने के लिये हम ने पानी ढूंढना शुरू किया। मगर अफसोस, पानी और दूध उस सामान के साथ रह गया था जो हनीफ खान व कसाना के पास था। हम प्रतीक्षा करते रहे पर वह नहीं आये। कोई दो घंटे बाद मुनीर अहमद ने हमें आगे बढने का हुक्म दिया। हमारी टांगों में जान ही नहीं थी फिर भी टीम लीडर के कहने पर हम चल पड़े। जैसे तैसे हम कोई पांच बजे बडी मर्ग पर पहुंचे और डेरा डाल दिया। पास में ही एक तालाब था। हम सब ने इस तरह पानी पीना शुरू किया जैसे अगले एक साल तक हमें पानी मिलने की आशा ही न हो। थोडी देर के बाद कसाना व हनीफ खान भी पहुंच गये। उन की हलात हम से भी ज़्यादा खराब थी। पानी अपने साथ होकर भी उन्होंने रास्ते

में पानी नहीं पिया था। हनीफ खान ने कहा कि रास्ता खोकर वह बहुत परेशान थे और सिर्फ हमें ढूंढने की कोशिश करते रहे।

पहले हम सब तम्बू गाडने में लगे। उस के बाद मुनीर अहमद ने सब लोगों में काम बांट दिया। जलाल दीन व राज नाथ को खाना बनाने का चार्ज दिया गया। गुलाम रसूल व जय कौल ने तम्बू के इर्द गिर्द नाली खोदने की ज़िम्मेदारी ली। हनीफ खान और कसाना तालाब से पानी लाने में लग गये और मुनीर अहमद व मैं कैम्प फायर के लिये लकडियाँ ढूंढने लगे। राज नाथ आस पास के इलाके का जायज़ा लेने लगा। गरज़ हर आदमी अपने अपने काम में जुट गया।

जंगल में अंधेरा जल्दी हो जाता है। खाना खाने से पहले हम आपस में बातें करने लगे। हनीफ खान अपनी बहादुरी की कहानियां सुना रहा था। बंदूक व बंदूक की लाईसन्स रखने की वजह से वह अक्सर हाईकिंग करने वालों के साथ जाता ताकि उन्हें जंगली जानवरों के हमले से बचा सके। इस से उस की अच्छी कमाई होती थी हालांकि उस का कहना था कि अब तक उस का किसी भी जंगली जानवर के साथ मुकाबला नहीं हुआ। हनीफ खान की सेहत अच्छी थी मगर शक्ल से बद-सूरत था। ऐसा लगता था कि शेर और चीते उसे देख कर ही भागते रहे होंगे।

कोई नौ बजे हम ने कैम्प फायर के लिये लकडी का ढेर लगाना शुरू किया। फैसला हुआ कि कैम्प फायर के सामने बैठ कर ही खाना खायेंगे। लकडी को बस जलाने की ही देर थी कि गुलाम रसूल को कोई आवाज़ सुनाई दी। उसने कहा, किसी के चलने की आवाज़ आ रही है। हम ने चारों ओर नज़र दौडाई पर अंधेरा होने की वजह से कुछ भी न देख सके। हम ने कान लगा कर सुनने की कोशिश की। मुझे तो कुछ सुनाई न दिया मगर जलाल दीन को ज़रूर कुछ दिखाई दिया। वह बोला, ''सचमुच कोई बला तालाब की तरफ जा रही है।'' यह सुन कर मुनीर अहमद ने हमें बडे तम्बू के अंदर जाने का इशारा किया। हम सब तम्बू के अंदर आ गये और एक दूसरे से लग कर बैठ गये। तब तक मुनीर अहमद ने हालात का जायज़ा लिया। उस के यह कहने के बाद कि सचमुच किसी बला के चलने की आवाज़ आ रही है, हम सब कांप उठे। बाद मैं यह समझ में आया कि आने वाली बला एक शेर है।

यँद्राखी पढ़ते पढ़ते मैं ने मुनीर की आवाज़ सुनी। वह बहुत आहिस्ता से हनीफ खान को बंदूक लाने के लिये बोल रहा था। मुनीर के कहने के बाद ही हनीफ खान को याद आया कि उस के पास बंदूक भी है। उस ने अपनी थैली में से बंदूक निकाली। मुनीर अहमद ने उसे आगे जाने का रास्ता दिया। अपनी जगह संभालते हुये मुनीर खान ने निशाना साधना शुरू किया। अब वह गोली चलाने ही वाला था कि जलाल दीन चिल्लाया, ''खबरदार! गोली मत चलाना।'' हम ने सोचा कि वह शेर के नाम से ही पागल हो गया है। मैं ने उस के माथे पर हाथ रखा, यह देखने के लिये कि कहीं उसे बुखार तो नहीं आया। उस ने मुझे धक्का दिया और बोला, ''मेरे बाप ने कहा है कि अगर शेर गोली खाकर ज़ख्मी हो जाये और मरे नहीं, तो वह बहुत ही खतरनाक हो जाता है और

जो उस के सामने आता है उसे खा जाता है।'' हम ने सोचा कि शायद वह सच बोल रहा है। पर हनीफ खान यह सब सुनने को तैयार नहीं था। उस ने कहा, ''मुझे शिकार के मामले में पूरी जानकारी है और इस बारे में मुझे किसी से कुछ सीखने की ज़रूरत नहीं।''

अंदर संघर्ष चल रहा था कि शेर को गोली मारनी है कि नहीं। बाहर शेर एक टक हमारी तरफ देख रहा था। जलाल दीन ने बंदूक को अपने हाथों से पकड कर रखा ताकि हनीफ खान गोली न चला सके। मुनीर अहमद ने जलाल दीन को समझाने की बहुत कोशिश की पर वह कुछ भी सुनने को तैयार नहीं था। इतनी देर में जय कौल ने बाहर की तरफ देखा और बोला, ''शेर आहिस्ता आहिस्ता हमारी तरफ बढ रहा है।'' कसाना ने हिम्मत करके बाहर की तरफ देखा और रोना शुरू किया। वह बोला, ''शेर तम्बू के साथ लग कर बैठा है।'' हमारे पैरों तले ज़मीन खिसक गई। हनीफ खान कुछ ज़्यादा ही भयभीत हुआ और बोला, ''अब गोली चलाने का मौका ही नहीं। गोली चलाने का साफ मतलब है शेर को हम पर हमला करने की दावत देना।'' मै यँद्राखी पढना भूल ही गया। अचानक जय कौल खडा हो गया और बोला, ''मैं ने एक फिल्म में ऐसा ही एक सीन देखा है। शेर मुँह खोले खड़ा था। सामने हीरोईन खौफ से अधमरी हो चुकी थी। वह शेर से कोई छः फुट के फासले पर थी। हीरो यह सब दूर से देख रहा था पर पास आने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था। शेर कभी हीरो को देखता और कभी हीरोईन को। इस के बाद वह दो कदम और हीरोईन की तरफ बढा। अब वह हीरोईन पर हमला करने ही वाला था कि हीरो को कुछ सूझा। उस के सामने सूखे घास की एक गठरी पडी हुई थी। उस ने गठरी उठायी और लाईटर से उस में आग लगा दी। फिर वह जलती हुई गठरी हाथ में लेकर शेर की तरफ दौड पडा। ज्योंही शेर की नज़र उस पर पडी, वह हीरोईन को छोड़ कर भाग खड़ा हुआ।'' जलाल दीन ने पूछा, ''तुम्हारा मतलब है कि हम भी घास की गठरी जलायें! घास कहाँ है?'' जय कौल ने कहा, ''अरे पागल हो क्या? लॅश (तुरंत जलने वाली लकडी) है ना!'' यह कह कर जय कौल ने एक लकडी उठायी और उसे जलाया। फिर एक और लकड़ी जलायी और दोनों लकड़ियों को हाथों में उठा कर रखा। इस के बाद सब लोगों ने लकड़ियाँ जलायीं। मुनीर अहमद ने तम्बू का कोना उठाया और सब लोग जलती हुई लकड़ियां लेकर बाहर निकल आये। डरपोक होने की वजह से मैं और कसाना तम्बू के अंदर ही रहे। अचानक मुझे खयाल आया कि सब लोग तो बाहर निकल गये। अगर दूसरी तरफ से शेर तम्बू के अंदर आकर हमें खा गया तो? हम भी उन के पीछे भागे। उस के बाद क्या हुआ, यह मत पूछो।

हम सब तम्बू के चारों तरफ घूमे। फिर तालाब की तरफ गये। न कहीं शेर था न उस की कोई परछाई। हम ने अंधेरे में ही आस पास के पूरे इलाके को छान मारा, पर कुछ न मिला। गुलाम रसूल हंस पडा। इस के बाद कुछ समझ में नहीं आया कि कौन पहले हँसा और कौन बाद में। खौफ की वजह से ही किसी को शेर दिखाई दिया था और किसी को उस की परछाई। किसी ने उसे पानी पीते हुये देखा था और किसी ने चलते हुये। वापस आकर हम ने कैम्प फायर की लकडियों में आग लगा दी।

कैम्प फायर पूरी शान के साथ जल रहा था। ट्राईपाड पर लटक रहे साबूत मुर्गे भुने जा रहे थे। जलाल दीन और जय कौल खाने पीने का सामान लगा रहे थे। मुनीर अहमद को खयाल आया कि कहीं अनजाने में कोई बंदूक का घोडा न दबा दे। उस ने हनीफ खान को आवाज़ दी और बंदूक बाहर लाने को कहा। गोलियाँ वापस निकालने के लिये मुनीर अहमद ने बंदूक की मैग्ज़ीन खोली पर यह क्या? बंदूक में तो गोलियाँ थी ही नहीं। मुनीर अहमद का चेहरा फक हो गया। हनीफ खान आँखें फाड़ फाड़ कर कभी खाली बंदूक को देखता और कभी मुनीर अहमद को।

हनीफ खान बंदूक में गोलियाँ डाले बिना ही शेर का शिकार करने निकला था। इस के बाद जिस तरह की शर्मिन्दगी उस को उठानी पडी, भगवान करे किसी और को न उठानी पडे।

✷ ✷ ✷

नबु लालु

मामला कुछ ज़्यादा ही लम्बा हो गया। नबु लालु ने सोचा ही न था कि बात इतनी बढ़ जायेगी। ऐसा आज पहली बार हुआ कि किसी ठेकेदार के साथ उस की तकरार हुई और मामला हद से बाहर निकल गया। हेड कलर्क सप्रू साहब ने बहुत कोशिश की कि झगडा भाई बन्दी से हल हो जाये पर नबु लालु नहीं माना। आफिस के सब लोग हैरान थे। नबु लालु का यह रूप उन्होंने पहली बार देखा था।

बात दर असल कुछ भी नहीं थी। अकरम खान को ड्राईवरों व क्लीनरों के लिये वर्दियाँ सप्लाई करने का ठेका मिला था। उस का कहना था कि सब से कम रेट होने की वजह से उस को यह ठेका मिला है। डार साहब, जो बडे साहब का पी.ऐ. था, ने भी इस बात की तायीद की पर नबु लालु यह बात मानने को तैयार नहीं था। केवल नबु लालु ही क्यों, निचले दर्जे के किसी भी मुलाज़िम के गले में यह बात नहीं उतरती थी। यह बात साफ थी कि बडे साहब, जिन्होंने सप्लाई आर्डर जारी किया था, रिश्वत नहीं लेते थे। वह खुद बडे ईमानदार थे लेकिन मातहत अफसरों ने निचली सतह पर ही सब कुछ तय कर लिया था। अकरम खान खुद चार टेंडर लेकर आया था और डार साहब के हवाले कर दिये थे। फिर सब ने मिल कर उस के नाम का आर्डर बना दिया। बडा साहब पूरे मामले से बेखबर था।

बडे साहब कभी भी छोटे छोटे मामलों में नहीं पडते थे। उन्हें मालूम था कि चपरासी से लेकर उन के पी.ए. तक रिश्वत लेते हैं और इस के बिना वह काम नहीं करते हैं। पर वह इन बातों की तरफ ध्यान नहीं देते थे। वह तब मामले की गहराई तक जाते जब मामला लाखों रुपये का होता। हज़ारों के मामले में वह कभी कुछ नहीं पूछते। कहते हैं उन्होंने एक बार डार साहब को साफ शब्दों में कहा था कि छोटे मुलाज़िम को अगर छोटी छोटी रिश्वत नहीं मिलेगी तो उस का गुज़ारा कैसे होगा ? डार साहब ने यह बात बहुत कम लोगों को बतायी थी मगर आफिस के मुलाज़िमों से कोई बात कब तक छुप सकती है ? धीरे धीरे सबको पता चल ही गया।

आज सुबह जब अकरम खान आर्डर लेने के लिये आया तो सीधा सप्रू साहब के पास पहुंचा। इधर उधर की बात करने के बाद सप्रू साहब ने डार साहब को बुलाया और तीनों आफिस से बाहर निकल गये, शायद चाय पीने के लिये। कुछ देर के बाद वह वापस आये। आर्डर लेने के लिये अकरम खान नबु लालु के पास पहुंचा। नबु लालु टाईपिस्ट-कम-डिसपैच कलर्क था। उस ने अकरम खान को गौर से देखा। फाईल में से आर्डर निकाल कर हाथ में पकडा और अकरम खान से बोला, ‘‘मेरा चाय पानी निकालो।’’ अकरम खान पुराना खिलाडी था। उस की पूरी ज़िंदगी मुलाज़िमों से लेन देन करने में गुज़री थी इसलिये किसी भी मुलाज़िम को उस से मांगने की ज़रूरत नहीं पडती थी। वह खुद सब के पास पैसा पहुँचाता था। पर नबु लालु इस आफिस में नया नया आया था इसलिये अकरम खान के साथ उस की ज़्यादा जान पहचान नहीं थी। अकरम

खान ने जेब से दस रुपये का एक नोट निकाला और नबु लालु को पकडाया। नबु लालु ने नोट वापस अकरम खान की जेब में डाल दिया और बोला, ''मेरे साथ मज़ाक नहीं चलेगा। साठ हज़ार का आर्डर है। खुदा की कसम, पच्चीस रुपये से एक पैसा कम नहीं लूंगा।''

नबु लालु उम्र का छोटा था, यही कोई बीस इक्कीस का। दो ढ़ाई साल से नौकरी कर रहा था मगर इस आफिस में आये हुये सिर्फ तीन महीने ही हुये थे। खाते पीते घर से था। उसका बाप नायब तहसीलदार था और उस की ऊपर की कमाई बहुत थी। इस वजह से नबु लालु भी अच्छा खासा पैसा खर्च करता था। पान सिग्रेट तो लेता ही था, दो कदम दूर जाने के लिये भी टांगा ढूंढता था। आफिस वाले इसी वजह से उसे नबु लालु कह कर पुकारते, इज़्जत देने के लिये कम और खिल्ली उडाने के लिये ज़्यादा।

पच्चीस रुपये की बात सुन कर ही अकरम खान को गुस्सा आया। बोला, ''तुम पागल तो नहीं हो गये हो? मैं ने पच्चीस रुपये कभी पी.ए.साहब को भी नहीं दिये हैं, तुम किस खेत की मूली हो?'' नबु लालु को भी खेत की मूली सुन कर गुस्सा आया। बोला, ''जाओ, आर्डर लेने के लिये कल आना। मैं ने अभी यह डिसपैच ही नहीं किया है।'' यह कह कर उस ने आर्डर फिर से मेज़ की दराज़ में रख दिया।

बात सप्रू साहब तक पहुँची। उस ने नबु लालु को अपने पास बुलाया और कहा, ''बेटे, अभी तुम बहुत छोटे हो। तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिये। खान साहब की पहचान ऊपर तक है। उस के साथ इस तरह का व्यवहार ठीक नहीं।'' यह कह कर सप्रू साहब ने अकरम खान को आवाज़ दी, ''खान साहब इधर आइये।'' खान साहब पास आया तो सप्रू साहब ने कहा, ''पंद्रह रुपये दे दो। बच्चा है, थोड़े ही इस को मारेंगे।''

अकरम खान ने बडप्पन दिखाया। बोला, ''सप्रू साहब! मैं तो दस से ज़्यादा कभी नहीं देता, पर आप बोल रहे हैं तो ठीक है। मैं आप की बात कैसे टाल सकता हूं।'' यह कह कर अकरम खान ने जेब से पंद्रह रुपये निकाले और नबु लालु को दिये। नबु लालु को कुछ ज़्यादा ही ना-गवार गुज़रा। उस ने सोचा कि डार साहब और सप्रू साहब ने खुद अच्छा पैसा लिया होगा और मुझे सिर्फ पंद्राह रुपये देकर चलता कर रहे हैं। उस ने सप्रू साहब से कहा, ''पच्चीस रुपये कुछ भी ज़्यादा नहीं है। मुझे मालूम है कि इस को इस काम में बहुत कमाना है।'' अकरम खान को नबु लालु की यह बात बहुत ना-गवार गुज़री। उस ने नबु लालु को गुस्से में कहा, ''तुम्हारा दिमाग तो खराब नहीं हुआ है? मैं तुम्हें एक ही थप्पड से सीधा कर दूंगा।'' नबु लालु के दिमाग में उस के बाप की नायब तहसीलदारी घुस आई। वह अकरम खान से बोला, ''जाओ करो क्या करना है। चाहो तो बडे साहब को भी रिपोर्ट करो।'' नबु लालु को मालूम था कि ऐसे मालों में कोई भी बडे साहब के पास जाने की हिम्मत नहीं कर सकता है। उसे यकीन था कि बडे साहब को ज़रा भी शक हुआ तो आर्डर ही कैन्सल कर देगा।

अकरम खान को लगा कि नबु लालु कुछ ज़्यादा ही चहक रहा है, शायद इस वजह से कि उस का बाप नायब तहसीलदार था। अपने आप को कुछ कम न समझ कर अकरम खान ने नबु लालु से कहा, ''खुदा की कसम, अब एक पैसा नहीं दूंगा। बोल मेरा आर्डर मुझे देता है कि नहीं?'' नबु लालु ने साफ इनकार किया। देखते ही देखते मामला बहुत संगीन हुआ। इस से पहले कि सप्रू साहब मामले की नज़ाकत को समझते, अकरम खान खड़ा हो गया और बडे साहब के कमरे में घुस गया। वहाँ क्या हुआ, यह कोई न जान पाया क्योंकि बड़े साहब ने चपरासी को बोल कर दरवाज़ा बंद करवाया था। थोड़ी देर के बाद अकरम खान कमरे से बाहर निकला। उस ने किसी के साथ कोई बात नहीं की और अपने घर की तरफ चल पडा।

ज्योंही डार साहब को यह खबर मिली, वह दौड कर सप्रू साहब के पास आ गया। सप्रू साहब ने उस को पूरी तफसील बतायी। डार साहब ने कहा, ''मामला इतना बिगड गया? मुझे खबर क्यों नहीं की? मैं नबु लालु को खुद समझाता।'' सप्रू साहब ने जवाब दिया, ''मैं ने खुद बहुत कोशिश की कि मामला सुधर जाये पर नबु लालु अकड़ा हुआ था। उस ने किसी की बात न सुनी।''

डार साहब और सप्रू साहब बहुत उदास थे। ऐसी घटना आज पहली बार घटी थी। बडे साहब को देखते ही सब के पसीने छूटते थे, उन से रिश्वत के पैसों की बात करने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता था। इसी बीच बडे साहब ने डार साहब को बुलवाया। डार साहब का चेहरा लाल हो गया। उस ने नबु लालु को बोला, ''मरवा दिया ना, अपने आप को भी और हमें भी। पता नहीं, अब क्या क्या सुनना पड़ेगा?''

दर असल बडे साहब को कहीं जाने की जल्दी थी। उस ने अकरम खान को भी दूसरे दिन आने को कहा था। डार साहब को देख कर उसने कहा, ''देख लो अपनी एडमिनिसट्रेशन! क्या कहूंगा कल मैं उस ठेकेदार को? इस लडके को कल हाज़िर रहने के लिए बोल दो।'' यह कह कर बडे साहब निकल गये।

सारी रात नबु लालु तारे गिनता रहा। नींद आंखों से गायब थी। अपने बाप से भी वह कुछ न कह पाया। दूसरे दिन क्या होने वाला है, यह सोच कर ही वह कांपता रहा। उस ने कभी यह सोचा ही न था कि अकरम खान सचमुच बडे साहब के पास शिकायत लेकर जायेगा।

दूसरे दिन सुबह बडे साहब ने अकरम खान और नबु लालु को एक साथ अपने कमरे में बुलाया। डार साहब भी साथ में था। बडे साहब ने कमरे का दरवाज़ा बंद करवाया। दरवाज़े के बाहर बाकी मुलाज़िम कान लगा कर अंदर की बात सुनने की कोशिश कर रहे थे। सप्रू साहब अपनी सीट पर परेशान हालत में बैठा हुआ था।

नबु लालु बडे साहब के कमरे में एक कोने में खडा था। उस का चेहरा पीला पड चुका था। अकरम खान कुर्सी पर बैठा था। डार साहब सामने खडा था। बडे साहब ने उसे बैठने का इशारा

किया और अकरम खान से कल हुये वाकये की तफसील मांगी। अकरम खान ने पूरी बात बता दी और साथ ही कहा, ''मैं ने अपनी खुशी से दस का नोट दिया था मगर वह पच्चीस रुपये से एक पैसा भी कम लेने को तैयार नहीं हुआ। आप ही बताईये, मुझे इस काम में कितना कमाना है?''

बडे साहब ने अकरम खान की बात पूरे ध्यान से सुनी। जब तक अकरम खान बोलता रहा, तब तक नबु लालु ने हिम्मत जुटाने की कोशिश की। उस ने सोच लिया कि अगर बडा साहब मुझ से कुछ पूछता हे तो मैं साफ इनकार कर दूंगा। मैं कहूंगा कि अकरम खान झूठ बोल रहा है। अगर डार साहब उस की तरफदारी करेगा तो मैं कहूंगा कि डार साहब भी झूठ बोलता है। यह भी कहूंगा कि यह दोनों मिले हुये हैं।

लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। बडे साहब ने नबु लालु से कुछ भी न पूछा। उस का चेहरा खतरनाक हो गया। माथे पर बल पड गये। आंखें मानो आग उगल रही थीं। उस ने डार साहब से कहा, ''मुझे एक बात समझाओ, यह ठेकेदार लोग बड़े बड़े अफसरों के पास जाकर ढ़ेर सारा पैसा देते हैं। जगह जगह गिफ्ट पहुंचाते हैं। अब अगर इस छोटे आदमी ने पच्चीस रुपये मांगे तो उस की जान निकल गई। आप को भी अच्छा खासा पैसा दिया होगा क्योंकि उस के बिना तो आप भी काम नहीं करेंगे। हाँ, छोटे मुलाज़िम को नहीं देगा, क्यों?''

माहौल एकदम बदल गया। डार साहब ने सोचा था कि पता नहीं नबु लालु पर आज कौन सी आफत आयेगी, पर बडे साहब का रूप ही आज अलग था। डार साहब ने अपना सिर झुका लिया। उस की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करना चाहिये। अकरन खाम ने अपने चेहरे का पसीना पोंछना शुरू किया। बडे साहब ने उसे कहा, ''आप को इस काम में बहुत कमाना है। पच्चीस रुपये क्या चीज़ है? ऐसे मामले लेकर मेरे पास मत आया करें। अगर आना ही है तो किसी अफसर की शिकायत लेकर आयें, लेकिन ऐसा आप कभी नहीं करेंगे।''

अकरम खान को पसीना छूट रहा था। डार साहब बडी मुश्किल से उस को लेकर बाहर निकल आया। अकरम खान सीधा अपने घर चला गया। आज वह किसी को मुंह दिखाने के काबिल ही नहीं रहा।

नबु लालु मन ही मन खुश हो रहा था। वह फूले नहीं समा रहा था। वह अब बडे साहब के कमरे में अकेला था। बडे साहब ने चपरासी को बुला कर दरवाज़ा बंद करवाया। नबु लालु की समझ में कुछ नहीं आया। वह बडे साहब को फटी निगाहों से देख रहा था। बडे साहब ने मेज़ की दराज़ में से एक छड़ी निकाली और कुर्सी से उठ खडा हुआ। फिर क्या था? उस ने नबु लालु को छडी से इतना मारा कि उस के जिस्म पर जगह जगह दाग नमूदार हो गये। बडे साहब ने कहा, ''जुमा जुमा आठ दिन हो गये तुम्हें नौकरी करते हुये, तुम अभी से पैसा मांगने लगे! वह भी मेरे आफिस में! अकरम खान वर्दियाँ सप्लाई करेगा कि तुम्हें पैसा देगा?'' यह कह कर बडे साहब ने एक भरपूर थप्पड नबु लालु के गाल पर मारा। नबु लालु के मुँह से चीख निकल गई और वह ज़ार

ज़ार रोने लगा। इस के बाद उस ने बडे साहब से माफी माँगी। बाकी मुलाज़िम दरवाज़े में बने चाबी के सुराख में से यह सब देख रहे थे।

नबु लालु जब अपनी कुर्सी पर पहुँचा, उस की आँखें लाल थीं। दूसरे मुलाज़िम उस के पास हमदर्दी जताने के लिये आये मगर उस ने उन के साथ कोई बात नहीं की। वह अपना सिर नीचे करके रहा। मुलाज़िम वापस अपनी अपनी जगह पर गये।

कोई दो घन्टे के बाद अकरम खान वापस आया और सीधा नबु लालु के पास पहुंचा। सप्रू साहब भी आया। नबु लालु ने अपना सिर उठाया। अकरम खान ने उसे कहा, ''नबु लालु! मुझे माफ करना।'' इस के बाद अकरम खान ने अपनी जेब से पच्चीस रुपये निकाले और नबु लालु के सामने रख दिये। नबु लालु ने सप्रू साहब की तरफ देखा। सप्रू साहब ने सिर हिला कर उसे पैसे रखने का इशारा किया। नबु लालु ने पैसे उठाये और अकरम खान की जेब में वापस रख दिये। नबु लालु ने कहा, ''अब बराबर पच्चास रुपये लूंगा, तब आर्डर दूंगा।'' अकरम खान की साँस रुक गई। सप्रू साहब वापस अपनी सीट की तरफ भागा। उस की समझ में ही नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है ?

यह सोच कर कि बडे साहब के पास फिर शिकायत करने का कोई मतलब नहीं है, अकरम खान ने जेब से पच्चास का नोट निकाला और नबु लालु के हाथ में थमा दिया। नबु लालु ने मेज़ से आर्डर निकाल कर उसे दे दिया। सप्रू साहब दूर से यह सब देख रहा था। वह यह समझ ही नहीं पा रहा था कि किस ने ठीक किया और किस ने गलत।

✷ ✷ ✷

तकदीर

घर पहुंच कर भी बख्शी साहब को आराम नहीं मिला। घूम घूम कर उस की आँखों के सामने आलम दीन आ रहा था। सूखा हुआ झुर्रियोंदार चेहरा, छोटी छोटी आंखें, सिर पर थोडे से बाल जिन में कुछ काले और कुछ सफेद थे, और सूखे हुये बाज़ू और टांगें। आलम दीन को बराबर सुनाई दे रहा था पर आंखों से साफ दिखाई नहीं दे रहा था। बात करने का अंदाज़ ऐसा जैसे हर बात की खबर रखता हो।

आलम दीन दिखने में कोई ६० साल का था मगर लोगों के कहने के मुताबिक वह ३२ साल का ही था। पहले पहले बख्शी साहब यह बात मानने को तैयार नहीं हुये लेकिन जब तारिक साहब ने इस बात की तायीद की तो वह हैरान हो गये।

आलम दीन जब बात करता था तो हर पांच छः मिनट के बाद उसे रुकना पडता था। आज जब उस की आंखों से आंसू निकल आये तो बख्शी साहब से बरदाश्त न हुआ। उस ने कहा, ''आलम दीन! मैं अपनी तरफ से पूरी पूरी कोशिश करुंगा तुम्हें नौकरी दिलाने की। बस, मुझे कुछ समय दो। मैं तुम्हारे लिये ऊपर तक जाने को तैयार हूं।'' इस के बाद बख्शी साहब उसका हाथ थामे हुये बाहर तक आया। जाते जाते जब आलम दीन ने एक बार फिर बख्शी साहब की तरफ मुड कर देखा तो बख्शी साहब की आंखों में भी आंसू आ गये।

आलम दीन को तारिक साहब ने कोई दो महीने पहले बख्शी साहब के पास भेजा था। तारिक साहब इस इलाके के बी.डी.ओ. थे और बख्शी साहब के साथ उन की अच्छी दोस्ती थी। तारिक साहब को इस इलाके में नौकरी करते हुये बहुत समय हो गया था इसलिये लोग उसे इसी इलाके का वासी मानते थे। नौकरी के सिलसिले में भी उन का लोगों के साथ सीधा वास्ता था जिस की वजह से गाँव वालों के साथ उन की ज़ाती जान पहचान थी। तारिक साहब ने बख्शी साहब को आलम दीन की पूरी कहानी सुनाई थी।

कहते हैं आलम दीन १२ साल का था जब वह अपने स्कूल के चार और बच्चों के साथ लाल पुल के रास्ते पाकिस्तान भाग गया था। उस के भागने के बारे में किसी को पता भी नहीं चलाता अगर मजीद यह बात अपने घर वालों को नहीं बताता। मजीद आलम दीन का दोस्त था और प्रोग्राम के मुताबिक उसे भी उस के साथ ही पाकिस्तान भागना था मगर बुखार आने की वजह से वह घर से न निकल सका। शाम को देर तक जब आलम दीन और उसके दोस्त स्कूल से वापिस नहीं आये, उन के घर वाले उन्हें ढूंढ़ते ढूंढ़ते मजीद के घर पहुंच गये। वहाँ उन्हें असली बात का पता चला। आलम दीन का बाप ज़मीनदार था। बेटे के पाकिस्तान भागने की खबर सुन कर उस की तो जान ही निकल गई। आलम दीन की माँ को गश आ गया और बीमार होकर उस ने बिस्तर पकड लिया। इस इलाके से पहले भी बहुत सारे लडके पाकिस्तान भाग गये थे लेकिन कोई वापिस नहीं

आया। हाँ, बीच बीच में उन की खबर आती रहती। सुनने में आया कि कुछ एक अच्छी कमाई कर रहे थे और कुछ भीख माँग रहे थे। जो भीख माँग रहे थे, वह भी अपने घर वालों के खौफ से वापिस आने को तैयार नहीं थे। कहते हैं एक बार दो चार बच्चे चोरी छुपे वापिस आने की कोशिश कर रहे थे जब फौजी सिपाहियों की नज़र उन पर पडी। आगे उन के बारे में कुछ भी पता नहीं चला कि वह पाकिस्तान वापिस गये या दरिया में डूब गये।

यहाँ वहाँ पता करके आलम दीन के बाप को मालूम हुआ कि पाकिस्तान जाने की स्कीम असल में रशीद ने बनाई थी। रशीद का ममेरा भाई दो साल पहले मुज़फ्फराबाद भाग गया था और उसी ने रशीद को पाकिस्तान आने के लिये उकसाया था। इतना ही नहीं, उस ने रशीद को रास्ता दिखाने वाले का नाम पता भी बताया था। यह आदमी एक दूसरे गाँव का हबीब डार था, जिस का काम ही लोगों को चोरी छुपे मुज़फ्फराबाद पहुँचाना था। लोग कहते थे कि हबीब डार इधर का माल उधर और उधर का माल इधर करके भी बहुत पैसा कमाता था।

रशीद ने जब अपने दोस्तों को पाकिस्तान जाने की बात कही, उन में बहुत सारे उस के साथ जाने को तैयार हो गये। रशीद ने हबीब डार के साथ बात करके भागने का दिन भी मुकर्रर कर लिया। ज्यों ज्यों यह दिन नज़दीक आता गया, दोस्त भी एक एक करके कम होते गये। रशीद के साथ जाने वालों की तादाद एक दिन पहले तक छः हो गई और जाने के समय तक पाँच।

आलम दीन और उसके दोस्तों के घर वालों ने बहुत कोशिश की पर लडकों का कोई पता नहीं चला। यहाँ तक कि पूछते पूछते वह लाल पुल तक पहुंच गये, पर हासिल कुछ न हुआ। हर तरफ जंगल होने की वजह से पाकिस्तान जाने वाले रास्ते बहुत थे। यदि जगह जगह फौजी जवान पहरा देते थे, फिर भी भागने वालों को कोई न रोक पाता था।

आलम दीन के पाकिस्तान भाग जाने के बीस साल बाद पता चला कि वह जम्मू की एक जेल में बंद है। यह बात उसी जेल में से रिहा हुये एक आदमी ने बताई, जिस का नाम सलीम खान था। सलीम खान आलम दीन के गाँव के पास ही दूसरे एक गाँव का रहने वाला था। जब आलम दीन की माँ ने यह बात सुनी, वह बेटे का मुँह देखने के लिये तडपने लगी। आलम दीन का बाप अब ज़िंदा नहीं था। वह आठ साल पहले मर चुका था।

आलम दीन जम्मू की जेल में क्यों बंद था और वह पाकिस्तान से जम्मू कैसे पहुँचा, यह किसी को मालूम नहीं था। पहले पहले गाँव वालों ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया और इस बारे में और जानने की कोशिश भी न की। पर जब तारिक साहब ने यह बात सुनी, वह सोच में पड गये। उन्होंने गाँव के बुज़र्गों की एक मीटिंग बुलाई। सलीम खान, जिस ने आलम दीन के बारे में खबर दी थी, को भी बुलाया गया। सलीम खान ने कहा कि उस ने खुद उस कैदी से मुलाकात की और यह कि कैदी ने ही उसे अपना नाम बताया। सलीम खान को यह मालूम नहीं था कि आलम दीन कहाँ से आया था और जेल में क्यों बंद था। आलम दीन ने उसे खुल कर कुछ नहीं कहा था।

केवल यह कहा था कि मौका मिले तो मेरे माँ बाप को मेरे बारे में बताना। सलीम खान ने आलम दीन की शक्ल व सूरत के बारे में जो बताया था, वह असली आलम दीन से मेल नहीं खाता था। उस के कहने के मुताबिक आलम दीन की उम्र बहुत ज़्यादा थी, जब कि असली आलम दीन तीस बत्तीस साल की उम्र का ही था।

तारिक साहब ने अपनी जान पहचान का फायदा उठाया। वह गाँव के कुछ आदमी लेकर जम्मू पहुंचा और वहाँ अपने एक दोस्त, जिस का नाम परवेज़ अहमद था, से मिला। परवेज़ अहमद पुलिस की नौकरी करता था। वह खुद इन लोगों के साथ उस जेल में गया जहाँ आलम दीन बंद था। वहाँ उस ने उन की मुलाकात आलम दीन से करायी।

कहते हैं जब तारिक साहब और दूसरे लोग आलम दीन से मिलने उस की कोठरी में पहुँचे तो उन्हें साफ साफ कुछ भी न दिखायी दिया। कोठरी में अंधेरा था। एक कोने में एक आदमी अपना सिर घुटनों में डाल कर बैठा हुआ था। बशीर मलिक, जो तारिक साहब के साथ आया था, उस आदमी के पास गया और उसे झंझोडा। उस आदमी ने अपना सिर उठाया और पहले बशीर मलिक और फिर दूसरे आदमियों को गौर से देखा। बशीर मलिक ने सामने से उस का चेहरा देखा और अपना फैसला सुनाया। उस ने कहा, यह आलम दीन नहीं है। कैदी ने कहा, ''मैं आलम दीन ही हूं। तुम कौन हो?'' बशीर मलिक बोला, ''मैं बशीर मलिक हूं। तुम अगर सचमुच आलम दीन हो तो बोलो, मुझे पहचानते हो क्या?'' कैदी बोला, ''कैसे पहचान सकता हूं। बीस साल हो गये मुझे तुम लोगों से दूर हुये। तुम मही-उद-दीन के बेटे तो नहीं हो?'' बशीर मलिक को जवाब बराबर मिल गया। बोला, ''हाँ, वही हूं। इन को जानतो हो क्या?'' बशीर मलिक ने दूसरे दो आदमियों की तरफ इशारा करते हुये कहा। कैदी उन को नहीं पहचान सका। बोला, ''तुम बोलो!'' बशीर मलिक ने उन का नाम बता दिया। कैदी को याद आया और बोला, ''यूसुफ मेरा हमसाया था और मजीद मेरे साथ पढता था। मजीद को भी मेरे साथ पाकिस्तान जाना था, पर वह आया नहीं।'' इस के बाद सब लोगों ने आलम दीन को गले लगाया। बशीर मलिक ने तारिक साहब का परिचय आलम दीन से कराया और यह भी कहा कि तारिक साहब की मेहरबानी से ही वह उस से मिलने यहाँ तक आये हैं।

आलम दिन ने बशीर मलिक से अपने घर वालों का हाल पूछा। उस ने कहा, ''मुहम्मद दीन आठ साल पहले इन्तकाल कर गये हैं। माँ ज़िन्दा है, बस तुम्हारा ही इन्तज़ार कर रही है। तुम्हें देख कर उसे नई ज़िंदगी मिलेगी।'' बाप के बारे में सुन कर आलम दीन रो पडा मगर आंखों में आँसू कहां थे कि धारा बन कर बह निकलते। बशीर मलिक के ज़ोर देने पर आलम दीन ने अपनी कहानी सुनाई।

* * *

बीस साल पहले जब आलम दीन और उसके दोस्त घर से भाग गये, हबीब डार जो उनको पाकिस्तान जाने का रास्ता दिखाने के लिये साथ आया था, ने उनको मुज़फ्फराबाद पहुँचाया। वहाँ उस ने उन्हें एक कश्मीरी चाय वाले के हवाले कर दिया। चाय वाले का नाम मकबूल खान था

और वह मुज़फ्फराबाद का रहने वाला था। एक दो दिन भरपूर खाना खिला कर उस ने आलम दीन और उसके साथियों को काम पर लगाया। काम था बरतन धोना और दुकान की साफ सफाई करना। पहले पहले तो लडकों को ऐसा काम करना अच्छा नहीं लगा मगर आहिस्ता आहिस्ता वह इस के आदी हो गये। आम तोर पर कश्मीर से भाग कर आये हुये लडके यहाँ इसी तरह का काम किया करते थे। समय बीतते आलम दीन और उसके साथियों की यहाँ के कश्मीरियों के साथ दोस्ती हो गई। रशीद को अपने मामा के लडके का कोई पता नहीं चला। हबीब डार को मालूम हुआ कि वह मुज़फ्फराबाद छोड कर कराची गया है। यह सुन कर रशीद बहुत दुखी हुआ। उस का मन अब मुज़फ्फराबाद में नहीं लग रहा था। एक डेढ़ महीना रह कर रशीद भी भाग गया। आलम दीन और उसके साथियों को यह पता ही नहीं चला कि वह कहाँ गया। आलम दीन ने सोचा कि वह भी कराची गया होगा।

आलम दीन चाय की दुकान पर लगभग दो साल रहा। रशीद के जाने के बाद उसका मन भी कराची जाने को कर रहा था पर किसी ने उस की मदद नहीं की। दो साल के बाद उस ने दुकान के एक गाहक से बात की। इस गाहक से उस की बहुत दोस्ती हो गई थी। गाहक मुज़फ्फराबाद का ही रहने वाला एक कश्मीरी था और नाम था जमाल खान। जमाल खान ट्रक चलाता था और अक्सर लाहौर जाता था। उस ने आलम दीन को दिलासा दिया कि वह उसे कराची तो नहीं, पर लाहौर ज़रूर ले जायेगा। आलम दीन ने यह भी गनीमत समझा।

एक दिन जमाल खान आलम दीन को अपनी ट्रक में लाहौर ले गया। उसके बाकी दोस्त चाय वाले के पास ही रह गये। जमाल खान ने आलम दीन से पूछा, ''लाहौर में तुम क्या करोगे? तुम्हारा कोई अपना यहाँ पर है क्या?'' आलम दीन ने कहा, ''कोई न कोई तो मिलेगा ही। हमारे गाँव के बहुत लोग यहाँ हैं। मैं ने सुना है कि वह सब अच्छी हालत में हैं। उन में से कोई न कोई तो ऐसा होगा जो मुझे अपने साथ रखेगा।''

''मगर तुम्हें घर से भागने की क्या मजबूरी थी? तुम वहाँ क्या करते थे?'' जमाल खान ने आलम दीन से पूछा। आलम दीन ने कहा, ''मैं स्कूल में पढता था। मुझे पाकिस्तान जाने का और यहीं पर रहने का बहुत शौक था। रशीद के मामा के लडके ने भी बताया था कि पाकिस्तान सचमुच जन्नत है। यहाँ के लोग कश्मीरियों से बहुत प्यार करते हैं और उनकी मदद भी करते हैं। यह सब सुन कर मेरा मन बहुत मचल रहा था।'' जमाल खान बोला, ''बेटे, अपना घर अपना घर ही होता है। वह कहीं और नहीं मिलता है। क्या तुम नहीं देख रहे हो कि यहाँ कश्मीर से आये हुये लोग किस तरह मज़दूरी करके अपना पेट भरते हैं?''

आलम दीन जमाल खान की बात सुन कर सोच में पड गया। कुछ समय से उसे घर की याद बहुत सता रही थी ... माँ बाप, यार दोस्त, रिश्तेदार आदि ... मगर पाकिस्तान देखने का और यहाँ रहने का जनून अब तक बरकरार था। जमाल खान ने कहा, ''तुम अभी बहुत छोटे हो। जब तक कोई नोकरी मिलती है, तब तक तुम मेरी गाडी के साथ ही रह सकते हो।'' आलम दीन को

यह सुझाव अच्छा लगा। उसने ने सोचा, ''मुझे भी तो बाद में कराची ही जाना है। यहाँ किस को रहना है?''

आलम दीन चार साल तक जमाल खान के साथ रहा। जमाल खान उसे अपने भाई जैसा प्यार दे रहा था। अब तक वह गाडी चलाना भी सीख चुका था। जमाल खान ने एक नयी गाडी खरीदी ओर उसे आलम दीन के हवाले कर दिया। अब आलम दीन नई गाडी चलाने में व्यस्त हो गया। जमाल खान उसे अच्छी तनखाह भी देने लगा। अब आलम दीन ने अलग से अपना चूल्हा जलाना शुरू किया।

और पांच साल गुज़र गये। आलम दीन ने अच्छा खासा पैसा जमा कर लिया। एक दिन उसे ट्रक लेकर कराची जाने का मौका मिला। जमाल खान साथ में था। उस के ज़रिये आलम दीन कुछ और कश्मीरियों से मिला और रशीद को ढूंढने की कोशिश की। पर रशीद नहीं मिला। मिलता भी कैसे? कराची थोडे ही कोई छोटी जगह थी? आलम दीन ने उस के बारे में सोचना ही छोड दिया।

आलम दीन को कराची पसंद आ गई। उसे लगा कि असली पाकिस्तान वही है। उस ने कराची में ही एक कमरा खरीद लिया। अब वह गाडी चलाना नहीं चाहता था। गाडी जमाल खान को वापस लौटा कर उस ने एक छोटी मोटी किराने की दुकान खोल ली।

आगे चल कर आलम दीन ने बहुत तरक्की की। छोटी सी दुकान एक बडी दुकान में तबदील हो गई। दुकान के ऊपर साईन बोर्ड लगाया गया 'आलम किराना स्टोर'। दुकान में अब नौकर चाकर भी आ गये। छः साल में आलम दीन बहुत अमीर बन गया। उस ने दुकान के पास ही एक मकान भी खरीद लिया।

आलम दीन के दुकान के सामने एक छोटा मोटा होटल था जिस का मालिक था सरवर खान। सरवर खान असल में पुंछ का रहने वाला था लेकिन पाकिस्तान बनने के समय वह अपने कुटुम्ब समेत कराची जाकर बस गया था।

सरवर खान अच्छा आदमी था। वह कोई ५० या ५१ साल का रहा होगा। आलम दीन के साथ उस की अच्छी जम गई। बीच बीच में वह आलम दीन की शादी अपनी एक रिश्तेदार लडकी के साथ कराने की भी बात करता पर आलम दीन उसके लिये तैयार नहीं हुआ। वह अपना घर बसाने से पहले अपनी माँ से मिलना चाहते था।

सरवर खान अपना कारोबार बढाना चाहता था। उसे एक बडा होटल बनाने की बडी चाह थी लेकिन उस के पास उतना पैसा नहीं था। एक दिन बातों बातों में उस ने आलम दौन से कहा, ''मैं चाहता हूं कि हमारा मेल जोल पूरी उम्र बना रहे। मेरा बडा अरमान है कि मैं अपने होटल को एक

बडे होटल में तबदील करूं पर मेरा पास उतना पैसा नहीं है। मेरी मानो तो तुम मेरे साथ हो जाओ ताकि हम दोनों साथ मिल कर काम करें।'' आलम दीन ने कहा, ''मैं दो दो ज़िम्मेदारियाँ कैसे सम्भाल सकता हूं? तुम देख रहे हो ना कि मैं अपने ही काम में कितना व्यस्त रहता हूं?'' सरवर खान ने पहले से सोच कर रखा था। वह बोला, ''तुम क्या जीवन भर तेल और नमक ही बेचते रहोगे? तरक्की करनी है तो ज़माने के साथ साथ चलना पडता है। खुदा ने चाहा, दो साल के अंदर ही हम एक इंटरनेशनल स्टैंडर्ड के होटल के मालिक होंगे। लाखों का हिसाब हम अपनी उंगलियों पर किया करेंगे।'' आलम दीन बात को समझ गया। सरवर खान चाहता था कि वह अपनी दुकान बेच कर पैसा होटल में लगा ले।

आलम दीन ने विचार किया। उसे सरवर खान की बात ठीक दिखाई दी। कुछ समय के अंदर ही सड़क के दोराहे पर 'होटल सरवर आलम'खडा हो गया। दोनों के पास जो जमा पूंजी थी, वह उन्होंने होटल में लगा ली। होटल बहुत बडा तो नहीं था पर इस इलाके में वह अपने तर्ज़ का एक ही होटल था। आहिस्ता आहिस्ता यह होटल दरमियाना तबके वाले लोगों और दफ्तरी मुलाज़िमों में बहुत लोकप्रिय हुआ। दिन ब दिन इस की आमदनी बढती गई।

एक दिन आलम दीन बाज़ार में घूम रहा था कि उस की नज़र एक बुज़र्ग आदमी पर पडी। यह आदमी आलम दीन के ही इलाके का था। आलम दीन ने उसे आवाज़ दी। वह पास आया तो आलम दी ने उसे कहा, ''मैं आप को जानता हूं। आप कश्मीर में सलामाबाद में रहते हैं ना?'' बुज़र्ग आदमी ने सिर हिलाया और कहा, ''पर मैं तुम को नहीं पहचानता हूं। तुम कौन हो?'' आलम दीन ने कहा, ''मैं आलम दीन हूं। मैं रामपुर में रहता था। मैं १८ साल पहले वहाँ से भाग कर आया था।'' बुज़र्ग आदमी बोला, ''मुझे शक सा हो रहा है। तुम दीन मुहम्मद के बेटे तो नहीं हो?'' आलम दीन ने हाँ कर दी। बुज़र्ग बोला, ''मैं दस पंद्राह दिन पहले यहाँ अपने एक रिश्तेदार के पास आया हूं। मैं तुम्हारे बाप को जानता था। वह एक अच्छा इनसान था। तुम्हारे घर से भागने की वजह से उसे बहुत तकलीफ पहुंची और वह मर गया। मैं ने सुना है कि तुम्हारी माँ भी बहुत बीमार है। शायद वह तुम्हारा मुँह देखने के लिये ही अभी तक जी रही है।'' आलम दीन यह सुन कर बहुत दुखी हुआ।

कुछ दिन बीत गये। आलम दीन घर जाने के लिये बहुत बेताब हुआ। उस ने सरवर खान से बात की। सरवर खान की पहुँच बहुत ऊपर तक थी। उस ने आलम दीन को यकीन दिलाया कि वह उस के कश्मीर जाने का इन्तिज़ाम करा देगा।

दिन बीतते गये। आलम दीन अपनी माँ का चेहरा देखने के लिये बेकरार था। कश्मीरियों को कश्मीर जाने के लिये आसानी से इजाज़त नहीं मिलती थी पर सरवर खान को यकीन था कि सब ठीक तरह से हो जायेगा।

सरवर खान की जान पहचान काम नहीं आई। आलम दीन को घर जाने की इजाज़त नहीं मिली। पाकिस्तान आने के बाद वह आज पहली बार रोया।

आलम दीन की हालत बिगडने लगी। सरवर खान से उस का यह हाल नहीं देखा गया। उस ने एक दूसरा तरीका खोजा। पाकिस्तान में ऐसे लोगों की कमी नहीं थी जो पैसे लेकर सरहद पहुँचा देते थे। सरवर खान ने ऐसे ही एक आदमी को बुलाया। उस का नाम था वकार खान। उस ने इस काम के लिये दो हज़ार रुपये मांगे। वह बोला, ''मुज़्जफराबाद के रास्ते जाना आज कल खतरनाक है। मैं तुम को सियालकोट के पास ही हिंदोस्तान के इलाके के अंदर पहुंचा दूंगा। उस पार जाकर कोई खतरा नहीं है मगर फिर भी तुम्हें एहतियात से चलना होगा। तुम्हें उस पार पहुंचाकर मेरी ज़िम्मेदारी खत्म हो जायेगी।'' आलम दीन राज़ी हो गया।

सफर बहुत लम्बा था। वकार खान और आलम दीन पहले तो लाहोर पहुंचे, फिर गुजरांवाला। वहाँ से वह एक ट्रक में सवार होकर सियालकोट पहुंचे। वहां वकार खान ने आलम दीन को वह रास्ता बताया जहाँ से होकर उसे जम्मू जाना था। आलम दीन अभी जाने को बेकरार था पर वकार खान ने उसे समझाया, ''अंधेरा होने दो, बाद में चले जाना।'' शाम के सात बजे वकार खान ने उसे सरहद पार करा दिया।

सरहद पार पहुंच कर आलम दीन ने लम्बी साँस ली। वहाँ से घर पहुंचने में उसे सिर्फ दो दिन का सफर तय करना था। वह आगे बढता गया। उस की आँखों के सामने उस का घर और माँ का चेहरा आ रहा था।

मगर किस्मत ने आलम दीन का साथ नहीं दिया। उस की समझ में ही नहीं आया कि कहाँ से तीन जवान आये और उस का हाथ पकड लिया। जवान हिंदोस्तानी फौजी नहीं थे बल्कि पाकिस्तानी थे। उन्होंने जब आलम दीन को अपनी चौकी पर पहुँचाया तब पता लगा कि वह अब भी पाकिस्तान के अंदर ही था। वकार खान उसे साफ तौर पर धोखा दे गया था।

आलम दीन का प्लान मिट्टी में मिल गया। वह पसीने से तर हो गया। पाकिस्तानी रेंजरों ने उसे वापस गुजराँवाला पहुँचाया और मिलट्री इंटेलिजेन्स के हवाले कर दिया। उन्होंने आलम दीन के नाम की एक नई फाईल खोली जिस में उसे हिंदोस्तानी एजेंट का नाम दिया गया। यह भी लिखा गया कि पाकिस्तानी रेंजर्स ने उसे चोरी छिपे हिंदोस्तान से पाकिस्तान आते हुये पकड़ लिया है। इस के बाद जो कुछ भी आलम दीन के साथ हुआ वह बयान करने के काबिल नहीं है। उस का नाम, उस का कराची का मकान, उस का कारोबार, कुछ भी सच नहीं माना गया। जो पैसे वह अपने साथ लेकर आया था, वह भी उस से जबरन छीन लिये गये।

आलम दीन पाकिस्तानी इन्ट्रोगेशन सेंटरों में दो साल रहा। कभी एक जगह, कभी दूसरी जगह। उस के साथ थर्ड डिग्री का भी बरताव किया गया। आखिर में जब पाकिस्तानी इंटेलिजेन्स ने उसे हिंदोस्तानी इलाके में 'पुश बैक' किया, वह अधमरा हो चुका था।

पर आलम दीन के लिये जिंदगी इतनी ही नहीं थी। उसे आगे भी तकलीफ देखना था। जम्मू इलाके में आते ही बी.एस.एफ. जवानों की नज़र उस पर पडी। उन्होंने देखा एक 'पाकिस्तानी जासूस' हिंदोस्तानी इलाके में घुस रहा है। उस के बाद बिलकुल वही हुआ जो उस के साथ पाकिस्तान में हुआ था .... इंट्रोगेशन, मार, थर्ड डिग्री तफ्तीश, एक इंट्रोगेशन सेंटर के बाद दूसरा इंट्रोगेशन सेंटर। जान लेवा मार से बचने के लिये आलम दीन ने वह सब कुछ कह डाला जो उस से कहलवाया गया। उस की हालत दिन ब दिन खराब होती गई, यहाँ तक कि उस के आँखों की रोशनी भी कम हो गई। तीस पेंतीस का जवान देखते देखते साठ साल का बूढा लगने लगा।

✷ ✷ ✷

तारिक साहब एक दूसरे की मदद से मिनिस्टर तक पहुँचा। मिनिस्टर को आलम दीन की पूरी कहानी सुनाई गई। साथ ही उस ने आलम दीन की ज़मानत देने और उस की पूरी ज़िम्मेदारी लेने का भी भरोसा दिलाया। इस सिलसिले में तारिक साहब को पंद्रह दिन जम्मू में ही रुकना पडा।

पूरे एक साल और तीन महीने कैद में रह कर आलम दीन को रिहा किया गया। उस के खिलाफ जो केस दर्ज हुआ था, वह ऊपर से हुक्म आने पर वापिस लिया गया। उस के बाद तारिक साहब ने उसे उसके घर पहुँचाया मगर आलम दीन की फूटी किस्मत ने उस का साथ यहाँ भी नहीं छोडा। जिस दिन वह घर पहुँचा, उस से एक दिन पहले ही उसकी माँ मर चुकी थी। जिस माँ के लिये आलम दीन ने इतनी मुसीबतें उठायीं, उस का चेहरा भी देखना उस के नसीब में नहीं था। लोगों ने कहा कि माँ भी अपने बेटे का चेहरा देखने के लिये बेकरार थी और मरते मरते भी उस की आँखें बाहर सड़क की ओर लगी हुई थीं।

✷ ✷ ✷

बख्शी साहब इन्ही खयालों में गुम था कि उसकी माँ ने उसे पुकारा। वह अब अक्सर बीमार रहती थी और बख्शी साहब घर पहुँच कर ज़्यादा तर उस के पास ही बैठता था। माँ की आवाज़ सुन कर बख्शी साहब को आलम दीन की माँ याद आ गई। सोचा, वह बेचारी भी अपने बेटे को इसी तरह ढूंढती रही होगी। बख्शी साहब ने अपनी आँखों में आये आंसू पोंछ डाले और माँ के पास पहुंच गया।

आलम दीन नौकरी करना चाहता था। उस के पाकिस्तान वापिस जाने का सवाल ही नहीं था। कानूनी तोर पर उस को इजाज़त मिल ही नहीं सकती थी और चोरी छिपे जाने का सवाल ही नहीं था। नौकरी के ही मामले में तारिक साहब ने बख्शी साहब से बात की थी। बख्शी साहब को अपने दफ्तर में कुछ आसामियों की ज़रूरत थी। आलम दीन ने चपरासी की जगह के लिये दरखास्त दी थी। बख्शी साहब को उस की दरखास्त ऊपर भेजनी पडी थी क्योंकि एक तो वह खास पढ़ा लिखा नहीं था, और दूसरे वह बहुत समय जेल में बिता कर आया था। बख्शी साहब ने बहुत दौड धूप की मगर उस की मेहनत का कोई नतीजा नहीं निकला। आलम दीन की दरखास्त ना-मंज़ूर की गई। यह बात बख्शी साहब ने तारिक साहब को भी बता दी थी।

इसी दौरान आलम दीन ने सरवर खान के साथ बात करने की कोशिश की। टेलीफोन पर सरवर खान ने ज़्यादा बात ही नहीं की। पहले पहले वह कहता रहा कि सब ठीक ठाक है और फिक्र करने की कोई ज़रूरत नहीं है। फिर एक बार यह कहा कि होटल को बहुत नुक्सान हुआ है। इस के आगे सरवर खान ने बात करने से ही इनकार किया। आलम दीन के एक पहचान वाले को पाकिस्तान जाने की इजाज़त मिल गई थी। आलम दीन ने उस के हाथ सरवर खान को एक चिट्ठी भेजी। वह आदमी जब सरवर खान को चिट्ठी पहुंचाने गया, तो उस ने किसी आलम दीन को पहचानने से ही इनकार कर दिया। उस आदमी ने आलम दीन को बताया कि सरवर खान का होटल अब थ्री स्टार होटल बन चुका था।

आलम दीन बहुत समय तक बख्शी साहब के पास आकर नौकरी के लिये पूछता रहा। बख्शी साहब उस को सच बताने से डर रहा था। वह उसे दिलासा देता रहा कि बात चल रही है। जब आलम दीन को तस्सली हुई तो उस ने बख्शी साहब के पास आना ही छोड दिया।

कोई एक महीना हुआ होगा आलम दीन को बख्शी साहब के पास आये हुये, जब एक अनहोनी हो गई। बख्शी साहब को बडे साहब ने अपने पास बुलाकर कहा, ''अगर तुम खुद ज़िम्मेदारी लोगे तो आलम दीन को नौकरी पर रख सकते हैं। छः महीने तक आरज़ी तोर पर, बाद में तुम्हारी सिफारिश के ऊपर उस की नोकरी मुस्तकिल कर सकते हैं।'' बख्शी साहब ने पूरी ज़िम्मेदारी ली।

दूसरे दिन सुबह ही बख्शी साहब ने तारिक साहब को अपने साथ लिया और आलम दीन के घर की तरफ चल पडे ताकि उसे यह खुश-खबरी दे सकें। जब वह आलम दीन के घर पहुंचे, वहाँ की हालत बदली हुई देखी। पूरा गाँव वहां जमा हो गया था। सब परेशान दिख रहे थे। बख्शी साहब ने पता किया कि क्या माजरा है। जब उसे असलियत का पता चला तो उस के सिर पर मानो आसमान गिर पडा। आलम दीन चोरी छिपे फिर पाकिस्तान भाग गया था। यह बात समद मागरे ने बताई। वह आलम दीन का हमसाया था। उस ने कहा, ''आलम दीन कल शाम को मेरे पास आया और बोला कि मैं ने पाकिस्तान वापिस जाने का मन बना लिया है। यहाँ मैं माँ के लिये

आया था, वह तो रही नहीं। नोकरी भी नहीं मिली जिस से मैं बाकी ज़िन्दगी आराम से गुज़ारता। अब मेरी ज़िन्दगी का एक ही मक्सद है और वह है सरवर खान से बदला लेना।''

उस के बाद आलम दीन के बारे में कुछ भी पता नहीं चला।

✹ ✹ ✹

अंतिम खेल

उन को 'छः की टोली' के नाम से पुकारते थे। उन में सब से बडे का नाम लालजी था। वह चौदह साल का था। छः के छः हमारे मुहल्ले के निकट मनियार मुहल्ले में एक दूसरे के पास ही रहते थे।

'छः की टोली' उन का उपनाम था। यह उपनाम उन्हें यों ही नहीं दिया गया था। समु काक ने यह उपनाम उन्हें बहुत सोच समझ कर और उन की गतिविधियों को गौर से देख कर ही दिया था। समु काक इसी मुहल्ले में रहने वाला एक सेवा मुक्त पुलिस अफसर था। उन का कहना था कि छः की इस टोली ने एक साथ रहने के विश्व के सब रिकार्ड तोड़ दिये हैं।

सच पुछो तो आठ साल पहले से, जब वह सभी लड़के निकट के प्राईमरी स्कूल में भर्ती हुये, वह साथ साथ ही रहे। मुहल्ले के बीचों बीच शहतूत का एक बड़ा पेड़ था। इसी पेड़ के नीचे उन्होंनी अपनी बैठक कायम की थी जिसे उन्होंने झाडू पोता करके साफ सुथरा बना लिया था। बारिश और बर्फ के मौसम को छोड़ कर वह सभी हर समय यहाँ पर बैठा करते, यहीं पर स्कूल का काम करते, आपस में बहस करते, सैर सपाटे का प्रोग्राम बनाते और पेड़ पर उगे शहतूत का फल खाते। फल खाने के लिये उन्होंने पेड़ की एक एक टहनी अपने अपने नाम कर ली थी। यह जताने के लिये कि इस पेड़ के फल पर केवल उन का हक़ है, उन्होंने पेड़ के तने पर चाकू से अपना अपना नाम अंकित कर दिया था। बर्फ के मौसम में वह बर्फ का एक बड़ा इनसान (हिम-मानव) बनाते और उसे इसी पेड़ के नीचे एक खास जगह पर बिठाते। बर्फ से ही उस का सिर और हाथ पाँव भी बनाते। टोली में सब से छोटे लड़के का नाम राम जी था। वह कोयले के टुकड़े से इस हिम-मानव के कान, नाक और मुँह बनाता। हिम-मानव के सामने एक पुरानी कांगड़ी रखी जाती जिस से वह और भी भयंकर हो जाता। पूरे जाड़े के मौसम में लडकों के बदले यही हिम-मानव उस पेड़ के नीचे तब तक रहता जब तक बसंत की हवा उसे पिघला न देती।

लड़कों का समय इसी तरह बीतता रहा। एक दिन लाल जी के एक रिश्तेदार लड़के ने उस के लिये दिल्ली से एक ट्रांज़िस्टर रेडियो लाया। साथ ही उस ने यह सूचना भी दी कि जल्द ही इंगलैंड में भारत और इंगलैंड के बीच क्रिकेट की सिरीज़ शुरू होने वाल है, और यह कि उन मैचों का आखों देखा हाल वह सीधे तोर पर इस रेडियो पर सुन सकते हैं। बस, इस के बाद लड़कों का तौर तरीका ही बदल गया।

ऐसी बात नहीं थी कि लड़कों ने इस से पहले रेडियो नहीं देखा था। सच तो यह है कि उन में से दो लड़कों के घर में पहले से रेडियो मौजूद था लेकिन उन के लिये इस का होना न होना कोई मतलब नहीं रखता था। उन के माता पिता केवल समाचार सुनने के लिये ही रेडियो बजाते थे क्योंकि क्रिकेट आदि में उन की दिलचस्पी नहीं थी। यह ट्रांज़िस्टर रेडियो आने से उन के मन की मुराद पूरी हो गयी। अब वह कभी भी अपनी मर्ज़ी का प्रोग्राम बिना रोक टोक सुन सकते थे।

लाल जी का काम बढ़ गया। वह अब क्रिकेट मैचों की जानकारी लेने लगा। इस के लिये उस ने एक नई कॉपी खरीदी जिस में वह सब जानकारी लिख कर रखता था ताकि ज़रूरत पडने पर हाथों हाथ मिले। भारत-इंगलैंड सिरीज़ शुरू होने से पहले ही उस ने आगे एक साल

तक होने वाले मैचों का कार्यक्रम लिख कर रखा। वह अब ज़्यादा तर बैठक से गायब रहता पर इस से किसी कोई परेशानी नहीं थी। सब जानते थे कि वह अपना 'काम' कर रहा है।

टोली में से किसी ने भी न कभी क्रिकेट खेला था और न मैच होते देखा था। लेकिन इस खेल के बारे में उन्होंने स्कूल के लड़कों से बहुत कुछ सुना था। लाल जी के रिश्तेदार लड़के ने उन को बताया था कि यह खेल इतना मुश्किल है कि बड़े बड़े देश जैसे अम्रीका, रूस और जापान भी इसे खेलने से डरते हैं। पर इस बात का लड़कों पर कोई असर न हुआ। वह बे-सब्री से भारत-इंगलैंड सिरीज़ के पहले मैच की प्रतीक्षा करते रहे।

मैच शुरू हुआ और सचमुच उस का आंखों देखा हाल ट्रांज़िस्टर रेड़ियो पर सुनाई दिया। पहले पहले लड़कों को कुछ कुछ बातें समझ में नहीं आई लेकिन पांच दिन के अंदर ही वह इस खेल में माहिर हो गये। मैच के दौरान वह आधी रात तक शहतूत के पेड़ के नीचे बैठ कर आंखों देखा हाल सुनते। हाँ, कभी कभी देर रात उन के घर वाले उन्हें भला बुरा कह कर घर ले जाते और खाना खाने पर मजबूर करते।

लाल जी की ज़िम्मेदारियाँ बढ़ गईं। सब से बड़ा होने के कारण उस के लिये क्रिकेट की पूरी जानकारी रखना ज़रूरी था। इस के लिये वह हर रोज़ अपने से बड़े लोगों से किस्म किस्म के सवाल करता और उन के जवाब मांगता। यही जवाब वह अपने साथियों तक पहुँचाता था। उन पर अपना रौब जमाने के लिये वह किसी किसी बात पर टिप्पणी भी कर देता ताकि यह बात साफ हो जाये कि उसे क्रिकेट की पूरी जानकारी हो गई है। पहले मैच के अंत तक लड़के बहुत कुछ जान गये थे, या यूँ कहें कि वह ऐसा सोच रहे थे।

पांच मैचों की सिरीज़ खत्म होने तक लड़के सचमुच ही क्रिकेट के बारे में बहुत कुछ जान गये थे। वह अब इस खेल के नियम भी जानने लगे। अब वह कभी कभी टीकाकार की बात पर भी टिप्पणी करते और अपना अलग फैसला सुना देते। ''बस, अब हम पूरी तरह क्रिकेट खेलने के क़ाबिल हैं'', वह सोचने लगे। ''मुहल्ले की कोई भी टीम हम से मैच खेलना चाहे तो हम तैयार हैं'', लाल जी ने बात साफ की। बाकी लड़कों ने ताली बजाई।

टीम बनाने के लिये ग्यारह खिलाड़ी चाहिये थे और वह छः ही थे। पर इस से उन को कोई परेशानी नहीं हुई। जिस काँटे दार तार लगे हुये प्लाट में वह खेलने वाले थे, वह ज़्यादा बड़ा नहीं था। इसलिये उस में फीलडिंग करने के लिये ग्यारह खिलाड़ी नहीं समा सकते थे। उन्होंने सोचा कि ज़रूरत पड़ने पर वह तमाशा देखने वालों में से भी कुछ लड़कों से फीलडिंग करा सकते हैं। जहाँ तक बैटिंग करने का सवाल था, उन्होंने फैसला किया कि पांच खिलाड़ी दो दो बार खेलेंगे।

एक दिन अच्छा महूरत देख कर लड़कों ने अपनी टीम का ऐलान कर दिया। उन्होंने शहतूत के पेड़ से टहनियाँ तोड़ कर चार विकेट बना लिये, तीन बैटिंग साइड के लिये और एक बाउलिंग साइड के लिये। बाज़ार में नया बैट दस रुपये का बिकता था, जिसे खरीदने की उन की सूरत नहीं थी। सब लड़कों का जेब खर्च मिला कर और कई दूसरे लोगों से पैसा मांग कर उन्होंने चार रुपये जमा किये। लाल जी, जो सब से बडा होने की वजह से कुदरती तौर पर कप्तान बनने वाला था, ने अपने घर से बेद की एक अच्छी लकड़ी लाई। यह लकड़ी एक बढ़ई के हवाले की गई जिस ने उसे एक सुंदर बैट में तबदील कर दिया। बढ़ई को पता चला कि लड़कों के पास चार रुपये से ज़्यादा कुछ नहीं है, इसलिये उस ने पैसों के लिये कोई ज़ोर ज़बरदस्ती नहीं की। उल्टा

उस ने बच्चों को लकड़ी की बनी एक छोटी गेंद भी दी। लड़के खुश हुये। अब उन्हें लगने लगा कि वह वाकई किसी भी टीम का मुकाबला कर सकते हैं। मगर लाल जी को कुछ और सूझा। उसने कहा कि दूसरों को ललकारने से पहले हमें कुछ दिन अभ्यास करने चाहिये।

अगले रविवार को वह सारा सामन लेकर खेल के मैदान में पहुँचे। अपने साथ वह मुहल्ले के दस बारह बच्चों को भी साथ लेकर गये ताकि खेल के दौरान वह तालियाँ बजाते रहें। बैटिंग की बारी पकड़ने के लिये उन्होंने परचियाँ डाली। लाल जी का पहला नम्बर लगा। वह बहुत खुश था। कुन्दन का नम्बर सब के बाद था इसलिये वह गेंद फैंकने के लिये निकला। कप्तान होने की वजह से लाल जी ने कुन्दन को गेंद फैंकने के कुछ गुर सिखाये। 'फास्ट गेंद कैसे फैंकी जाती है और स्पिन कैसे किया जाता है।' कुन्दन यह सुन कर सिर हिलाता रहा, जिस का मतलब यह था कि वह सब कुछ समझ रहा है।

लाल जी बैटिंग करने के लिये क्रीज़ पर पहुँचा। मैदान पर इस तरह नज़र दौड़ाई जैसे वह कोई महान खिलाड़ी हो। ओवर की पहली गेंद लेने से पहले उस ने कुन्दन को एक ट्रायल गेंद फैंकने की विनती की। वह अब खेलने के लिये तैयार था। इशारा पाते ही कुन्दन ने एक तेज़ गेंद फैंकी जिसे लाल जी तक पहुँचने में कुछ समय लगा। लाल जी ने गेंद को बहुत ज़ोर से मारा पर वह कुन्दन तक पहुँचने से पहले ही रुक गई। बच्चों ने तालियाँ बजाईं।

अब समय हो गया ओवर की पहली आधिकारिक गेंद खेलने का। कुन्दन दूर से दौड़ता हुआ आया और गेंद फैंकी। लाल जी एक कदम आगे आया ताकि इस बार गेंद को ज़्यादा ज़ोर से मार सके। लेकिन कुछ करने से पहले ही वह आउट हो गया। उस के बीच वाला विकेट दो गज़ दूर गिर कर ज़मीन चाट रहा था। लाल जी का बैट हवा में ही रह गया। बच्चों ने इस बार भी ताली बजाई। लाल जी बुत बना हुआ खड़ा था और उस का मुख लाल हो चुका था।

लाल जी के बाद मक्खन की बारी थी। वह लाल जी से दो साल छोटा था लेकिन उस की सेहत अच्छी थी। कुन्दन गेंद को अपने हाथों में नचा रहा था। पहली गेंद उसने तेज़ फैंकी थी इसलिये अब की बार वह स्पिन फैंकना चाहता था। उस ने गेंद फेंकी, जिस का स्पिन के साथ दूर का भी वास्ता नहीं था। मक्खन थोड़ा सा बायें को झुका और गेंद को हवा में ही ज़ोर से मारा। गेंद आसमान की तरफ उछल कर और एक बंगले की खिडकी का शीशा तोड़ कर कमरे में घुस गई। शीशा ठस ठस करके नीचे गिरा। मक्खन बहुत घबराया। बंगले की खिडकी से एक गंजे आदमी ने अपना सिर बाहर निकाला और चिल्लाया। उस की आँखें गुस्से से लाल थीं। इस से पहले कि लड़के कुछ समझते, बंगले से एक नौकर दौड़ता हुआ आया और उस ने मक्खन को गर्दन से पकड़ लिया। उस के पीछे गंजा आदमी लकड़ी की गेंद हाथ में लेकर आ रहा था। उस की सफेद कमीज़ चाय से रंग गई थी। उस ने मक्खन के गाल पर एक भरपूर थप्पड़ मारा। मक्खन नीचे गिर गया। गंजा आदमी जैसे पागल हो गया था। उसने मक्खन को ज़बरदस्त मारा। टीम का लीडर होने की वजह से लाल जी को सामने आने पड़ा। उस ने गंजे आदमी से विनती की लेकिन उस ने लाल जी के गाल पर भी भरपूर तमाचा मारा। यह देख कर कुन्दन को गुस्सा आया। वह दौड़ कर आया और उस ने नौकर का हाथ पकड़ लिया। गंजे आदमी ने कुन्दन को एक लाथ मारी। वह दूर ज़मीन पर गिर गया। बच्चे यह सब देख रहे थे और रो रहे थे। साथ ही वह गंजे आदमी और नौकर को कोस भी रहे थे। अब गंजे आदमी ने लाल जी और मक्खन को दोनों हाथों

से पकड़ लिया। वह टूटे हुये शीशे की कीमत, कमीज़ की धुलाई का खर्चा और चीनी मिट्टी से बने प्याले की कीमत मांग रहा था। कुल मिला कर यह आठ रुपये बनते थे। लड़कों के पास एक पैसा नहीं था और गंजा आदमी उन्हें छोड़ने को तैयार नहीं था। उस रास्ते से एक आदमी जा रहा था। वह बीच बचाव के लिये सामने आया। उस ने गंजे आदमी से विनती की कि पैसों में थोड़ी कमी की जाये। गंजे आदमी को तरस आया। उस ने दो रुपये कम कर दिये पर लड़कों के पास देने को कुछ भी नहीं था। बीच बचाव करने वाले आदमी ने एक तरकीब बता दी। उस ने लड़कों से बैट और गेंद देने के लिये कहा जिन की कीमत उन के ही कहने के मुताबिक चार रुपये थी। लड़के रो रहे थे। गंजे आदमी की समझ में आ गया कि उन के पास कुछ भी नहीं है। वह थोड़ा और पिघल गया। उस ने लड़कों को इस शर्त पर जाने दिया कि दूसरे दिन वह उस का बाकी पैसा ले कर आयेंगे।

गंजा आदमी अपने नौकर को साथ लेकर चला गया। लड़के भी एक लाईन बना कर घर की तरफ चल पड़े। लाल जी सब के आगे था और बच्चे सब के पीछे। सब सिर झुका कर चल रहे थे। लाल जी, मक्खन और कुन्दन अब भी अपने हाथ पाँव सहला रहे थे। वापसी पर उठाने के लिये कुछ भी सामान नहीं था। विकेट ग्राऊंड में ही छोड़े गये ताकि सबूत रहे और लोगों को पता चले कि लड़के यहाँ कभी खेलने आये थे। उन्होंने फैसला किया कि मुहल्ले में किसी को भी इस घटना की खबर न दी जाये। बच्चों को भी मना किया गया।

लड़कों का क्रिकेट खेलने का सपना सपना ही रहा। दूसरे दिन उन्होंने कसम खाई कि वह अब कभी क्रिकेट नहीं खेलेंगे। यह सोच कर कि कहीं आंखों देखा हाल सुन कर उन में से किसी का दिल क्रिकेट खेलने के लिये मचल न उठे, उन्होंने ट्रांज़िस्टर रेडियो को एक कपडे में लपेट लिया और उसे एक बड़े संदूक में पुरानी किताबों के नीचे छुपा दिया। इतना ही नहीं, अगले एक साल तक वह उस बंगले के सामने से भी नहीं निकले कि कहीं गंजा आदमी उन्हें पकड़ कर पैसा न मांगे। हालांकि इस वजह से उन्हें स्कूल जाने के लिये एक लम्बे रास्ते से जाना पड़ रहा था।

जहाँ तक शहतूत के पेड़ के नीचे उन की बैठक का सवाल था, वह उस दिन के बाद खाली ही रही। लड़के इस बात से भी डर रहे थे कि कहीं गंजे आदमी की नज़र उन पर न पड़े। इस के बाद सर्दी का मौसम आया और बहुत बर्फ गिरी। मगर इस बार कोई हिम-मानव नहीं बना। आस पास सब बर्फ से ढ़का हुआ था। शहतूत की टहनियाँ नीचे की तरफ झुकी हुई थीं और उन के सूखे पत्तों से पानी टपक रहा था। शायद वह भी लड़कों की किस्मत पर मातम कर रो रहे थे।

✷ ✷ ✷

त्रिशूल छड़ी

उस दिन सोमवार था और मास्टर जी स्कूल नहीं आये थे। फिर भी हम चौकस रहे। शोर नहीं मचाया। कोई ग्यारह बजे यह बात पक्की हो गई कि मास्टर जी आज नहीं आ रहे हैं। हम बहुत खुश हुये। अब हम ने बहुत शोर करना शुरू किया। कुछ बच्चों ने अपनी अपनी सलेट पर तबला बजाना शुरू किया और कुछ बच्चे ऊंची आवाज़ में गाने लगे। कुछ बच्चे ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगे और कुछ ठहाके मार कर हंसने लगे। शोर सुन कर मुख्याध्यापक हमारे कमरे में आये और उसे देख कर हम चुप हो गये। उन्होंने हमारे मॉनीटर को खड़ा कर दिया और उस से पूछा, ''कौन कौन शोर कर रहा था?'' मॉनीटर की आवाज़ बंद हो गई क्योंकि वह खुद मास्टर जी की नकल करके हमें पढ़ाने का ड्रामा कर रहा था। मुख्याध्यापक ने हमें कान पकड़ी की सज़ा दी। सज़ा पाकर हमें नानी याद आ गई। इस के बाद उन्होंने मॉनीटर को हमें पढ़ाने के लिये कहा।

हमारे मास्टर जी का नाम नील कंठ था। उन का घर हब्बा कदल में नदी के किनारे था। उन के पास दो अचकन थे, एक नीले रंग का और दूसरा काले रंग का। वह एक दिन नीला अचकन पहनते थे और दूसरे दिन काला अचकन। टांगों में वह सफेद पाजामा डालते थे और पैरों में बिना फीते के जूते। सिर पर हलके गुलाबी रंग की पगड़ी रखते थे।

हम पांचवीं कक्षा में पढ़ते थे। कक्षा में कुल अठारह लड़के थे। सुबह प्रार्थना के बाद जब हम अपनी कक्षा में पहुँचते थे, हमारे चेहरों पर रोनी सूरत हुआ करती थी। हम एक एक करके ज़मीन पर बिछे टाट पर बैठते और मास्टर जी की प्रतीक्षा करते। उन के कक्षा में आने पर हम खड़े हो जाते और 'आदाब अर्ज़' कहते। मास्टर जी सिर हिला कर जवाब देते, कुरसी पर बैठते और रजिस्टर खोल कर हमारी हाजिरी लेते। मास्टर जी जिस लड़के का रोल नम्बर बुलाते, उसे खड़े होकर 'हाज़िर जिनाब' बोलना पड़ता था। मास्टर जी उस लड़के को ध्यान से देखते और फिर दूसरा रोल नम्बर बुलाते।

हम मास्टर जी से बहुर डरते थे। वह पढ़ा पढ़ा कर हमारा खून निकालते थे। जब कोई शौचालय जाने की विनती करता, मास्टर जी एकटक उस के मुख को देखते। जिसे सचमुच शौचालय जाने की ज़रूरत नहीं होती, उस का मुख पीला पड़ता और वह वापिस अपनी जगह पर बैठ जाता। यदि किसी लड़के ने स्कूल का काम नहीं किया होता, मास्टर जी की कड़क आवाज़ से उस का पसीना छूटता था। फिर मास्टर जी उस त्रिशूल छड़ी की तरफ इशारा करते जो उन्होंने दरवाज़े के पीछे लटका कर रखी थी। त्रिशूल छड़ी की तरफ देखते ही लडके की चीख निकल जाती। वह दस दस बार मास्टर जी से माफी मांगता और आगे ऐसी गलती न करने का वादा करता। यदि किसी लड़के से कोई बड़ी गलती हो जाती तो मास्टर जी छड़ी हाथ में लेकर उस लड़के को हाथ फैलाने को कहते। हाथ फैलाने की बात सुनते ही पूरी कक्षा में हंगामा होता था। लड़का मार खाये बिना ही चिल्लाना शुरू करता और बाकी लड़के उस के बदले मास्टर जी से दस दस बार माफी मांगते।

हमें दिन में केवल एक बार ही मास्टर जी अच्छे लगते थे। छुट्टी होने से पहले वह हम सब को अपने पास बुलाते और हमारा हाल पूछते। किसी से उस के पिताजी की तबीयत के बारे में

पूछते और किसी से उन की गाय के बारे में। किसी से फीस न भरने की वजह पूछते और किसी को गरीब होने के लिये स्कूल फंड में से पैसे देने की बात करते। किसी से पूछते कि उस के पिता की ड्यूटी कहाँ पर है और किसी से यह पूछते कि उन के घर में बीमार का क्या हाल है। मतलब यह कि मास्टर जी को हर एक की चिन्ता रहती थी और वह हर किसी की मदद करने को तैयार रहते थे। वह किसी को पैसे देकर मदद करते, तो किसी को किताबें देकर, किसी को अपनी तरफ से नई वर्दी दिलाकर और किसी को स्कूल के बाद फिर पढ़ा कर।

हम इस त्रिशूल छड़ी से क्यों डरते थे और असल में यह छड़ी क्या थी? वास्तव में यह बेद की एक टहनी थी, जिस का सिरा त्रिशूल की तरह था। त्रिशूल का हिस्सा एक फुट लम्बा था और पीछे का हिस्सा कोई तीन फुट लम्बा था। मास्टर जी ने इस टहनी की छाल उतरवा कर उस पर तेल का लेप लगाया था। अब यही चार फुट लम्बी छड़ी हमारे लिये अभिशाप बन गई थी।

यह त्रिशूल छड़ी हमारी कक्षा में सात महीने पहले आई थी। मास्टर जी इसे अपने साथ लाये थे और इसे मेज़ पर रख कर हम से यूं सम्बोधित हुये थे, ''यह छड़ी देख रहे हो क्या?'' हम सब ने अपना सिर हिलाया। वह बोले, ''यह सीधी सादी छड़ी नहीं है। यह छड़ी मैं ने अपनी जान जोखिम में डाल कर बारह साल पहले गांदरबल पहाड़ी की चोटी से लाई है। इस छड़ी की विशेषता यह है कि इसे कोई चोरी नहीं कर सकता। यदि इस से झूठ बोलने वाले को एक बार मारें तो वह सच उगलता है। यदि किसी ने चोरी की हो तो यह छड़ी उसे देख कर ही हिलने लगती है और उस की तरफ झुक जाती है। इस छड़ी से शेर भी डरते हैं।'' शेर की बात कहते हुये मास्टर जी ने छड़ी अपने सीने से लगा ली। वह आगे बोले, ''मैं एक दिन पहलगाम गया था। छड़ी मेरे साथ थी। देर रात को मैं अंधेरे में खो गया और मैं अपने घर वालों से अलग हो गया। मैं रास्ता ढूंडने की कोशिश ही कर रहा था कि मैं ने एक शेर को सामने से आते हुये देखा। मैं डर गया। मैं से सोचा कि आज मेरा अंत होने वाला है। ज्योंही शेर की नज़र मुझ पर पड़ी, उस ने मेरी ओर छलांग लगा दी। मगर कुदरत का कमाल देखो। मेरे हाथ में यह छड़ी थी और वह शेर के सिर से लगी। बस, फिर मत पूछो क्या हुआ। शेर ने डरते डरते छड़ी को देखा और जंगल की तरफ भाग गया। दूसरी बार मैं बस में बैठ कर सोपोर जा रहा था। बस में बहुत भीड़ थी। एक युवक ने मुझे अपनी सीट दी और मैं बैठ गया। जब कंडक्टर टिकट देने आया तो मेरे होश उड़ गये। मेरी जेब किसी ने काट ली थी और मेरा बटुआ गायब था। कंडक्टर ने मुझे डांटा। बोला गाड़ी से नीचे उतर जाओ। मैं ने छड़ी खिडकी के पास ही रखी थी। ज्योंही मैंने छड़ी उठाई, यह मेरे हाथ से फिसल कर पीछे बैठे एक युवक के ऊपर गिरी। युवक ने इसे उठा कर खिडकी से बाहिर फैंकना चाहा कि इस का एक सिरा उस की जेब में फंस गया। इसी जेब में मेरा बटुआ था। यह वही युवक था जिस ने मुझे अपनी सीट दी थी। मेरे मुँह से चीख निकल गई, ''मेरा बटुआ!'' युवक ने बटुआ वहीं छोड़ा और गाडी से उतर कर भाग गया। इस तरह इस छड़ी ने मेरा बटुआ मुझे वापस दिलाया। एक बार मेरी कक्षा के एक बच्चे ने घर वालों से झूट बोल कर स्कूल से छुट्टी की थी। दूसरे दिन जब वह स्कूल आया और छड़ी के पास पहुँचा, छड़ी उस के पाँव पर गिर पड़ी। मैं समझ गया कि बच्चे ने कुछ न कुछ गलत किया है। जब मैं ने उस से पूछने के लिये छड़ी उठाई, वह रो पड़ा और सच्ची बात बता दी। एक और बार मैं ने एक बच्चे को गलत हरकत

करने के लिये हाथ पर इसी छड़ी से मारा। उस के हाथ पर छड़ी का काला निशान पड़ गया। आज दो साल के बाद भी वह निशान उस के हाथ पर मौजूद है।

यह बातें सुन कर हम सहम गये। इसी लिये इस त्रिशूल छड़ी का नाम सुनते ही हमारी जान निकलती थी।

जब से मास्टर जी ने त्रिशूल छड़ी स्कूल में लाई थी, तब से वह एक बार ही उसे अपने घर पर ले गये था। उस दिन उन्होंने कहा था कि घर में एक बच्चा बहुत शरारत करता है, इसलिये इस छडी से उस की खबर लेनी है। यह बात सुन कर हमें और भी ज़्यादा डर लगा। जब वह अपने बच्चे को नहीं छोड़ता है तो हमें कैसे छोड़ेगा।

आज हम खुश थे। मास्टर जी स्कूल नहीं आये थे। हम ने सोचा कि दिन भर हंगामा करते रहेंगे। मुख्याध्यापक के आने से रंग में भंग पडा, पर उन के जाने के साथ ही हम फिर गाना गाने लगे और नाचने लगे। हम ने सोचा कि ऐसा दिन फिर कब आयेगा ? हम ने त्रिशूल छड़ी को एक जगह छिपा कर रखा ताकि उस की नज़र हम पर न पडे। मुख्याध्यापक फिर वापस नहीं आये। उन्हें शायद यकीन हुआ था कि मॉनीटर हमें ठीक तरह से पढ़ा रहा होगा।

मध्यांतर के दौरान निका को कुछ खयाल आया। वह हमारे कान में बोला, ''मेरी मानो तो त्रिशूल छड़ी को ही गायब कर देंगे।'' यह सुन कर हम घबरा गये। मैं ने कहा, ''मास्टर जी को जब पता चलेगा तो वह क्या हमारी पिटाई नहीं करेगा ?'' निका ने कहा, ''पता कैसे चलेगा ? हम किसी से कुछ कहेंगे ही नहीं। छड़ी भी नहीं होगी तो पूछेंगे किस से ?'' मुझे यह बात ठीक तो लगी पर खतरा बहुत था। हम अभी बात ही कर रहे थे कि राजा को शक हुआ। वह बोला, ''तुम लोग कुछ पका रहे हो। मुझे भी बोलो नहीं तो मैं मास्टर जी से कहूंगा।'' हम ने सोचा यह लड़का सचमुच ही गड़बड़ कर देगा। हम ने उसे सारी बात बता दी। वह खुश हुआ। बोला, ''स्कीम अच्छी है। लेकिन छड़ी मैं गायब कर दूंगा।'' हम मान गये। उस को बताया कि छड़ी को नदी में जाकर ही डाल देना है। उस ने हाँ कर दी।

राजा बाहर निकल गया और हम ने खिड़की से उसे छड़ी पकड़ा दी। उस ने इधर उधर देखा और छड़ी लेकर निकल गया। कोई आधे घंटे के बाद वह वापिस आया। हम ने पूछा, ''छड़ी कहाँ फेंकी ?'' उस ने इशारे से ही बताया कि नदी के बीच में छोड़ कर आया हूं। दूसरे किसी बच्चे को पता ही नहीं चला क्योंकि वह सब खेलने में और एक दूसरे के बाल नोचने में व्यस्त थे। शाम को जब हम घर की तरफ जा रहे थे, राजा कुछ सोच रहा था। हम ने पूछा, ''क्या बात है ?'' वह कुछ न बोला। हम ने सोचा कि वह छड़ी को पानी में फेंकते हुये डर गया होगा।

मंगलवार को मास्टर जी स्कूल आये। हाज़िरी लेकर जब उस ने पूछा कि सोमवार को किस ने क्या किया, तो हमारे होश उड़ गये। वह जानते थे कि सोमवार को हम ने खूब मस्ती की होगी। लगता था कि मुख्याध्यापाक ने भी उसे सब कुछ बता दिया है। मास्टर जी ने एक एक बच्चे से पूछा कि सोमवार को किस ने क्या किया था, लेकिन सब चुप रहे। कोई कुछ न बोला। इस के बाद मास्टर जी ने त्रिशूल छड़ी लाने को कहा।

लेकिन छड़ी मिली ही नहीं। दरवाज़े के पीछे, मेज़ के नीचे, टाट के नीचे, अलमारी के अंदर, मतलब छड़ी को हर जगह ढूंढा गया पर वह न मिली। मॉनीटर को भी कुछ मालूम नहीं था। मास्टर जी को बहुत गुस्सा आया। वह समझ गये कि किसी बच्चे ने चाल चली है। उस ने

एक एक करके हम सब से पूछा। मैं निका की तरफ देख रहा था और वह राजा की तरफ। थक हार कर मास्टर जी ने कहा, ''तुम में से ही किसी बच्चे ने छड़ी चुरायी है पर कोई बोलता नहीं है। यदि कल सुबह तक छड़ी वापस अपनी जगह पर नहीं होगी तो एक एक की चमडी उधेड दूंगा।'' यह कह कर मास्टर जी ने कुछ इस तरह हमारी तरफ देखा मानो हमें जिन्दा ही निगल लेंगे। निका, राजा और मैं ने फैसला किया कि अगर हड्डी पसली भी टूट जायेगी तो भी हम सच नहीं बतायेंगे।

बुधवार को जब मास्टर जी स्कूल आये, छड़ी उन के हाथ में थी। हम हैरान थे। मैं ने राजा की तरफ देखा। वह परेशान लग रहा था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि छड़ी पानी से निकल कर मास्टर जी के हाथ में कैसे आ गई। इस का मतलब साफ था कि यह छड़ी कोई साधारण छड़ी नहीं थी। यह सचमुच एक अद्‌भुत छड़ी थी। हम मास्टर जी तरफ देख रहे थे। लग रहा था कि उन्हें बहुत दुख पहुँचा है। उन्होंने छड़ी मेज़ पर रखी और बोले, ''कल बहुत अन्याय हुआ। मैंने तुम लोगों को बुरा भला कहा लेकिन गलती मेरी अपनी थी। मैं दर असल यह छड़ी शनिवार को ही अपने घर पर ले गया था पर मुझे याद नहीं था। आज सुबह जब मैं घर से चलने लगा तो मेरी नज़र इस पर पड़ी। यह हमारे आंगन में पड़ी हुई थी। शायद यहाँ से ले जाकर मैं ने ही इसे आंगन में रखा होगा। इस गलती के लिये मैं तुम सब से माफी मांगता हूं।'' माफी की बात सुन कर हम सब रोने लगे। मास्टर जी हमारे पास आये और एक एक करके हम सब को गले लगाया। उन बच्चों को तो उन्होंने अपनी गोद में ही उठाया जिन के ऊपर उन्होंने सब से ज़्यादा शक किया था।

मध्यांतर के समय हम सब खेलने के लिये गये लेकिन राजा हमारे साथ नहीं आया। वह कक्षा के अंदर ही रहा। पूछने पर उस ने कहा कि उसे स्कूल का काम करना है। बाद में जब हम और मास्टर जी वापिस कक्षा में आये तो देखा कि राजा ज़ोर ज़ोर से रो रहा है। मास्टर जी को लगा कि उन के माफी मांगने से राजा के दिल को ठेस पहुँची है। उन्होंने उसे गोद में उठा लिया और अपने पास बिठा लिया। उन्होंने राजा से पूछा, ''अब क्यों रो रहे हो। छड़ी की तो बात ही खत्म हो गई है। मुझ से गलती हुई थी इसलिये मैं ने माफी मांगी। माफी मांगना अच्छी बात है। इस से पाप नष्ट हो जाते हैं।'' यह कहकर मास्टर जी ने उस के सिर पर हाथ फेरा। मास्टर जी का हाथ लगते ही राजा ने फिर ज़ोर ज़ोर से रोना शुरू किया और उन के हाथों को चूमने लगा। राजा ने कहा, ''मास्टर जी, मुझे माफ कीजिये।'' मास्टर जी ने कहा, ''कैसी माफी? तुम ने क्या किया है।'' हम सब उस के बात सुनने के लिये आगे आये। राजा ने कहा, ''छड़ी को आप लेकर नहीं गये थे। उसे मैं ले गया था।'' सब बच्चे हैरान हो गये। मास्टर जी भी हैरान हो गया। उन्होंने कहा, ''यह तुम क्या कह रहे हो? छड़ी तो मुझे मेरे घर में मिली।'' राजा ने कहा, ''मास्टर जी! छड़ी गायब करने की चाल हम तीनों ने चली थी। मैं इस को लेकर नदी के पास पहुँचा पर वहाँ कुछ लोग नहा रहे थे। इसलिये मैं इसे पानी में न डाल सका। फिर मैं इसे लेकर पुल पर चढ़ा ताकि पुल के ऊपर से इसे पानी में फेंक दूं। ज्योंही मैं इस को फेंकने लगा, मैं ने दूर से अपने पिता जी को आते देखा। मैं डर के मारे दौड पड़ा लेकिन ज़्यादा दूर न जा सका क्योंकि सामने पत्थर की एक बड़ी दीवार थी। मैं ने सोचा कि पिता जी के पास पहुंचने से पहले ही छड़ी को फेंकना चाहिये। इसलिये मैं ने उसे दीवार के ऊपर से फेंक दिया। शायद दीवार के उधर आप का

ही आंगन था।'' हमारी तरफ देख कर राजा ने कहा, ''मैं ने तुम लोगों की पिटाई से बचने के लिये तुम से झूट बोला था।''

मास्टर जी हैरान थे। उन्हें मालूम पड़ा कि छड़ी के खौफ से ही राजा ने यह सब कुछ किया है। उन्हें अब यह छड़ी सांप की तरह दिखाई दी। मगर साथ ही उन्हें इस बात की खुशी भी हुई कि राजा ने सच बोला। उन्होंने राजा को माफी दी।

मास्टर जी ने बच्चों को अपने सामने बिठाया और बोले, ''यह छड़ी कोई अद्‌भुत छड़ी नहीं है। यह मैं ने अपने आंगन के ही एक पेड़ से काट कर बनाई है। मैंने जो कुछ भी तुम लोगों को इस के बारे में बताया, वह सब झूट था। मैं कभी भी तुम लोगों पर हाथ नहीं उठाना चाहता था क्योंकि तुम सब मेरे अपने बच्चों की तरह हो। मैं केवल तुम्हारे मन में इस छड़ी का भय डालना चाहता था ताकि तुम अच्छी तरह पढ़ो लिखो और स्कूल का काम करो।'' यह कहते कहते मास्टर जी का गला सूख गया। उस समय हमें मास्टर जी सचमुच ही बहुत अच्छे लग रहे थे।

छुट्टी के समय मास्टर जी ने त्रिशूल छड़ी को अपने साथ लिया। बोले, ''जिस चीज़ से बच्चों के मन में डर पैदा हो, वह चीज़ रखना ही गलत है। आज मैं इस छड़ी को जला ही दूंगा ताकि इस का नाम व निशान मिट जाये।'' पर मास्टर जी ऐसा नहीं कर सके। निका ने मास्टर जी के हाथ से छड़ी लेली और उसे अपने सीने से लगाया। उस ने मास्टर जी से कहा, ''मास्टर जी! यह छड़ी आप को यहीं रखनी पड़ेगी। जब आप यहाँ से तबदील होकर जायेंगे तो इसे हम आपकी निशानी समझ कर रख लेंगे।'' मास्टर जी ने छड़ी छोड़ दी।

मास्टर जी अपने घर की तरफ चल दिये। कुछ दूर जाकर मेरी नज़र उन पर पड़ी। वह रुमाल से अपने आँसू पोंछ रहे थे।

✹ ✹ ✹